सम्राट् की आँखें

सम्राट् की आंखें

(सम्राट् पृथ्वीराज चौहान के जीवन पर आधारित
बारवी सदी का एक ऐतिहासिक उपन्यास)

कमल शुक्ल

संजीव प्रकाशन, नई दिल्ली-२

मूल्य : पैंतीस रुपये / संस्करण : सन् १९९१ /
प्रकाशक : संजीव प्रकाशन, २६१३, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२ /
मुद्रक : नवीन आर्ट प्रिंटर्स, द्वारा सविता प्रिंटर्स नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

Samrat ki Aankhen : Kamal Shukla : Rs. 35.00

चौहान की विजय

रंगमहल के आँगन में शहनाई के बोल बुलन्द हो रहे थे। दासियाँ खुशी से फूली नहीं समाती। वे आनन्दातिरेक से झूम-झूम उठतीं। परिचारक भी अपने में पूरी तरह मगन थे।

रानी अगमा के सामने चन्दन की चौकी पर चाँदी का थाल रखा था। उसमे सात बातियों वाला घी का दीपक जल रहा था। उसके निकट ही एक छोटी-सी सोने की थाली रखी थी। उसमें तिलक के लिये कुमकुम (केशर) पुष्प तथा अक्षत थे।

महल के फाटक पर नौबत के नगाड़े बज रहे थे। राजपथ के दोनों ओर प्रजा खड़ी थी। वह अपने विजयी सम्राट् के लौटने की प्रतीक्षा में रत थी। क्या बच्चे, क्या बूढ़े और क्या जवान सभी के हाथों में फूल थे, जो वे श्रद्धापूर्वक अपने सम्राट् के आगमन पर उनपर बरसाने के लिये आतुर हो रहे थे।

शुभ समाचार पहले ही आ चुका था कि तराइन के मैदान में सम्राट् पृथ्वीराज ने मुहम्मद गौरी को पराजित कर दिया। गौरी बन्दी बना लिया गया है। सम्राट् उस कैदी गजनी के बादशाह को देहली ला रहे हैं।

सात लाख फौज लेकर सम्राट् ने मुहम्मद गौरी का सामना किया। यवन सम्राट् हार गया। वह भारत विजय करके उसपर अपना आधिपत्य जमाने आया था।

मुहम्मद गौरी के साथ उसका खास गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक भी बन्दी बना था। इसके लिये कहा जाता था कि यह गौरी का दाहिना हाथ है, उसका मुख्य सेनापति है और उसका सबसे बडा विश्वासपात्र।

तीसरे पहर का समय था। राजपथ को गुलाबजल से सींचा गया। कदली-पल्लवों तथा आम्र-पल्लवों के तोरण बनाये गये। उनपर मंगल-कलश शोभा पा रहे थे।

सहसा दूरी पर तोप का एक गोला छूटा। भीड़ में शोर मच गया कि सम्राट् की सवारी आ रही है।

आगे-आगे बाजे बज रहे थे। चौहान की लाल पताका फहरा रही थी। सम्राट् चौहान हाथी के हौदे पर बैठे थे। उनकी दाहिनी ओर घोड़े पर सवार चन्द्र कवि थे, जिन्हें चन्द्रभाट तथा चन्द वरदाई भी कहा जाता।

सम्राट् के बाईं ओर उनके प्रधान सेनापति चामुण्डराय थे। वे भी घोड़े पर आसीन थे। पीछे पैदल सेना थी। उसके बाद हाथी, फिर घुड़सवार।

जैसे ही सम्राट् का हाथी राजपथ पर आया, ठीक तभी जनता-जनार्दन उनकी जय-जयकार करने लगी।

उच्च स्वरों में नारे बुलन्द हो रहे थे—"सम्राट् चौहान की जय। पृथ्वीराज चौहान की जय। दिल्ली नरेश की जय। भारत सम्राट् की जय।"

सम्राट् पर प्रजा ने फूलों की वर्षा ऐसी की कि सारे का सारा राजपथ फूलों से बिछ गया।

रंगमहल के फाटक पर पहुँचते ही सम्राट् का हाथी रुक गया। हौदे पर सीढ़ी लगा दी गई। सम्राट् नीचे उतर आये। दासियाँ मंगल गीत गाने लगीं।

रानी अगमा ने पति के तिलक लगाया। फिर आरती कर, सम्मानपूर्वक उन्हें महल में लिवा लाई।

पटरानी अगमा ने सम्राट् को चाँदी की कुर्सी पर बैठाया। दो दासियाँ पीछे खड़ी होकर सम्राट् पर चँवर डुलाने लगीं।

"आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ, आर्यपुत्र।"

रानी अगमा के मुँह से जैसे ही निकला, ठीक तभी सम्राट् मुस्कराये और कहने लगे—"खुशी की बात ही है, महारानी। मुहम्मद गोरी को मैं बन्दी बनाकर लाया हूँ।"

"अब इस शैतान को बन्धन-मुक्त मत करना, प्राणनाथ! यह नीच हमारे देश को गुलाम बनाने आया था।"

"दरबार लगने पर उसका निर्णय होगा।"

"आज विश्राम कीजिये राजन्, दरबार कल लगाना।"

"तुम मेरा कितना ध्यान रखती हो, रानी!"

"पति पत्नी के लिए परमेश्वर होता है प्राणनाथ। मैं…।"

अभी रानी अगमा इतना ही कह पाई थी कि सम्राट् चौहान बीच में हँसकर बोल उठे—"महारानी, इन बातों को छोड़ो और यह बतलाओ कि तुम्हें कोई कष्ट तो नहीं हुआ?" "मैं भारत की साम्राज्ञी हूँ, आर्य-पुत्र। देश की महारानी को कष्ट कैसा? बस जब से तुम गये, भगवान् से यही माँगती रही कि मेरे सौभाग्य का सूरज अस्त न हो। हमारा देश गुलाम न हो। इस पवित्र भारत-भूमि पर यवन न आएँ।"

"महारानी, भगवान् ने तुम्हारी प्रार्थना सुन ली। अच्छा अब मैं आराम करूँगा। अनुराधा को भेज दो। वह आकर वीणा पर कोई राग गाए।"

रानी अगमा ने ताली बजाई। एक परिचारिका तत्क्षण ही सामने आ गई। उसे आदेश मिला कि वह जाकर अनुराधा दासी को बुला लाये।

अनुराधा आ गई थी। वह नीचे आसन पर बैठ गई। उसकी उँगलियाँ वीणा के तारों पर थिरकने लगीं।

सम्राट् अब बिस्तर पर लेट गये थे। रानी अगमा उनके पैर दबाने लगी। वे मौन थे। वीणा की झंकार वातावरण को गुंजरित कर रही थी।

अनुराधा का स्वर भी गूंज उठा। वह गा रही थी—मधुर-मधुर बोल, वीणा मधुर-मधुर बोल।"

सम्राट् देर तक अनुराधा का संगीत सुनते रहे। वे उठकर बैठ गये और अपने गले से मोतियों का हार उतारकर अनुराधा की ओर फेंकते हुए बोले—"बहुत अच्छा गाती हो, दासी। सचमुच तुम कोकिल-कण्ठी हो। यह लो अपना ईनाम। तुम्हारी वीणा तभी बन्द होगी, अनुराधा, जब मैं नींद के लोक में पहुँच जाऊँगा।"

अनुराधा ने जल्दी से हार उठाकर अपने गले में डाल लिया। उसके मुँह से प्रसन्नता-भरे स्वर में निकल गया—"भारत सम्राट् पृथ्वी…

चौहान की जय हो। जब तक गंगा-जमुना में पानी है, हमारी महारानी का सुहाग अमर रहे। हमारे सम्राट् दीर्घजीवी हो।"

बस वीणा फिर बजने लगी। सम्राट् की पलकें बन्द हो गई। रानी अगमा के होंठो पर मन्द स्थिति थी। अनुराधा गा रही थी। वीणा के स्वर गूँज रहे थे। वातावरण मुखर-मुखर उठता।

अब सम्राट् को नीद आने लगी थी, लेकिन वे जानते थे। उन्हें राजनीति का बहुत अच्छा ज्ञान था।

राजा को दिन में कभी नही सोना चाहिए। यह सांझ की बेला थी। वे विश्राम कर रहे थे और सगीत का रस ले रहे थे।

भारत सम्राट् का दरबार

दोपहर की बेला बीत चुकी थी। तीसरा पहर होते ही सम्राट् चौहान का दरबार लग गया। सभी दरबारी यथा स्थान बैठे थे। जैसे ही सम्राट् दरबार में आये, उनकी जय-जयकार होने लगी। वे आकर सिंहासन पर आसीन हो गये। उनके सम्मान में सभी दरबारी खड़े हो गये थे। वे भी बैठ गये। सम्राट् पृथ्वीराज ने अपने महामन्त्री की ओर देखा। वे बोले—महामन्त्री, दरबार की कार्यवाही आरम्भ कर दो।"

"जो आज्ञा, महाराज।"

सम्राट् के पास ही उनके प्रधान सेनापति चामुण्डराय बैठे थे। दूसरी ओर थे उनके प्रिय मित्र चन्द्र कवि।

महामन्त्री ने सम्राट् से कहा—"राजन्। बन्दी मुहम्मद गौरी को दरबार में बुलाया जाये। आज उसी का निर्णय होगा। वह देश का दुश्मन है। हमारी आजादी छीनने आया था। खुद ही बन्दी बन गया।"

अभी मन्त्री की बात पूरी हुई थी कि चामुण्डराय उठकर खड़ा हो गया। उसने विनम्रता के साथ सम्राट् से कहा—"मुहम्मद गौरी को क्या दण्ड देंगे, श्रीमान ?"

"दण्ड ?"

"हाँ दण्ड, राजन् !"

"चामुण्डराय, दण्ड से बड़ी क्षमा है। मैं मुहम्मद गौरी को क्षमा कर दूंगा। वह विदेशी है। वह हार गया। वह मेरी कैद में है "

"राजन् ! आपकी यह सबसे बड़ी भूल होगी। जो दुश्मन आपको गुलाम बनाने आया था, आपका देश जीतने आया था, उसके साथ दया। यह कहाँ का निर्णय है ?" "तुम समझते नही हो, सेनापति ! क्षत्रियों की शोभा क्षमा में ही है। मैं मुहम्मद गौरी को अवश्य क्षमा कर दूंगा।"

अब चन्द्र कवि से नही रहा गया। वह एक झटके के साथ उठकर

खड़ा हो गया और आवेश में आ, पृथ्वीराज से कहने लगा—"भारत सम्राट् होकर बच्चों जैसी बातें करते हो, पृथ्वीराज ! मैं कहता हूँ कि साँप के दाँत तोड़ दो। उसको कुचल दो। दुष्ट पर दया करने का परिणाम कुछ अच्छा नहीं होता है।" "हाँ, यही होना चाहिए, चन्द्रभाट, मेरा भी सम्राट् से यही कहना है।" यह कहकर महामंत्री ने चन्द्र कवि का समर्थन किया।

पृथ्वीराज को हँसी आ गई। वे धीरे से बोले—"तो तुम्हारी सबकी राय क्या है ?" "मुहम्मद गौरी को मौत का दण्ड दिया जाए। वह लुटेरा है, हमलावर है और है हमारे देश का शत्रु।"

"अच्छा महामंत्री। मुहम्मद गौरी को दरबार में उपस्थित किया जाए। मैं उससे भी पूछूंगा कि वह अपने लिए क्या सजा चाहता है।" "जो आज्ञा महाराज।"

महामंत्री के आदेश पर बन्दी मुहम्मद गौरी को दरबार में लाया गया। उसके गले में लोहे का तौक पड़ा था। वह नीचे से लेकर ऊपर तक लोहे की जंजीरों से जकड़ा था। उसके पीछे ही खड़ा था। उसका खरीदा हुआ गुलाम जिसे कुतुबुद्दीन ऐबक कहते थे। वह भी जंजीरों से जकड़ा था। उसकी भी गरदन नीचे झुक रही थी।

सम्राट् ने गौरी की ओर देखा। वे बोले—"गजनी के सुलतान मुहम्मद गौरी, मेरी तरफ देखो। मैं तुमसे कुछ पूछना चाहता हूँ।"

गौरी की निगाह ऊपर उठी। उसने सम्राट् को देखा।

तभी सम्राट् ने प्रश्न कर दिया—"गौरी, तुम जिस इरादे को लेकर हमारे देश में आये थे, तुम्हारा वह सपना पूरा नहीं हुआ। तुम कैदी बन गये। बोलो, अब क्या चाहते हो ?"

"मैं कुछ भी नहीं बोलूंगा। मैं हार गया। मेरी किस्मत का सितारा डूब गया। अब तो मैं आपका कैदी हूँ। आपको क्या बतलाऊँ कि मैं क्या चाहता हूँ ?"

"मुझे अपने मन की बात बतलाओ, गौरी, और यह भी साफ-साफ कहो कि मैं तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार करूँ।"

"मेरे साथ वही सलूक कीजिए, चौहान, जो एक राजा दूसरे राजा के

साथ करता है। मैं शहंशाह गजनी का हूँ और आप हिन्दुस्तान के मालिक हैं।"

"बहुत ठीक, बहुत ठीक, लेकिन एक बात है, गौरी।"

"क्या, चौहान ?"

"तुम हमारे शत्रु हो और दुश्मन को कभी माफ नहीं किया जाता। इन्साफ यही कहता है।"

"मैं माफी का तलबगार हूँ, चौहान। मैं अपने गुनाह की माफी चाहता हूँ। मुझे आजाद कर दो। मैं जिन्दगी-भर आपका शुक्रिया अदा करूँगा।"

सम्राट् पृथ्वीराज मुहम्मद गौरी को कुछ जवाब दें, उससे पहले ही दरबार में शोर मच गया। सभी दरबारी अपनी-अपनी कह रहे थे। कोई कहता कि इस दुश्मन का सिर धड़ से अलग कर दो। कोई कहता कि इसे जमीन में गाड़ दो। किसी का कहना था कि मुहम्मद गौरी को मौत की सजा दी जाए।

"शान्त···! शान्त !"

सम्राट् जोर से चिल्लाये। दरबार में सन्नाटा छाकर रह गया। वे गौरी की ओर उन्मुख हुए और जल्दी-जल्दी व्यस्त स्वर में कहने लगे—"अब तुम्हारा इरादा क्या है, गौरी ?"

"कैसा इरादा ?"

"तुम हिन्दुस्तान जीतने आये थे। फिर आ सकते हो। आखिर मुझे यकीन कैसे हो ?" "मैं वादा करता हूँ, चौहान। खुदा की कसम खाता हूँ कि अब हिन्दुस्तान की तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखूँगा।"

"मैं तुम्हारे मुँह से यही सुनना चाहता था, गौरी। तुम देख रहे हो। तुम सुन रहे हो। सारा दरबार तुम्हारे खिलाफ है।"

"मेरा गवाह अल्लाह ताला है, रसूल है। मैं इस्लाम की कसम खाता हूँ कि मैं हिन्दुस्तान जीतने कभी नहीं आऊँगा। मुझपर रहम करो, चौहान, और मुझे आजाद कर दो।"

"नहीं, यह कभी नहीं होगा। मैं अपने हाथ से मुहम्मद गौरी का सिर काटूँगा।"

यह कहते हुए युवराज ताहर ने दरबार में प्रवेश किया। उसके हाथ में नंगी तलवार थी। वह गौरी पर वार करना ही चाहता था। तब तक सम्राट् जोर से चिल्लाये—"युवराज, बन्दी की हत्या करने में कोई शोभा नहीं है। दूर हट जाओ। यह मेरा आदेश है।"

युवराज ताहर पीछे हट गया। सम्राट् ने गौरी से कहा—"जो तुमने भरे दरबार में वादा किया है, उसे कभी भूलोगे तो नहीं गौरी?"

"मैं वादा करता हूँ, कुरान की कसम खाता हूँ कि अब हिन्दुस्तान कभी नहीं आऊँगा।"

"तो फिर हम लोग आज से दोस्त हैं। हमारी दुश्मनी हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो गई। सेनापति, मुहम्मद गौरी को आजाद कर दो।"

सेनापति ने मुहम्मद गौरी के बन्धन खोल दिये। कुतुबुद्दीन ऐबक को भी स्वतन्त्र कर दिया गया। दोनों ने झुककर सम्राट् को अभिवादन किया। वे वहाँ से चल दिये।

दरबार में देर तक मुहम्मद गौरी की ही चर्चा चलती रही। चन्द्र कवि सम्राट् पर नाराज था। उसका कहना था कि चौहान ने यह सबसे बड़ी भूल की है, जो हाथ आये शिकार को छोड़ दिया। देख लेना, गौरी एक दिन धोखा जरूर देगा। इसमें कोई सन्देह नहीं।

चामुण्डराय भी सन्तुष्ट नहीं था। सम्राट् ने उसका कहना नहीं माना। उसे इसका महान दुःख था। युवराज ताहर बाप के सामने बड़बड़ा रहा था। उसका कथन था कि साँप को ऐसे ही छोड़ दिया गया। यह अच्छा नहीं हुआ।

सम्राट् मौन थे। वे सबकी बातें सुन रहे थे। उन्हें लग रहा था कि उन्होंने एक महान उपकार किया है। उन्हें यही करना चाहिए था। क्षत्रियों की यही शोभा है।

कुछ देर बाद सम्राट् उठकर खड़े हो गये और अन्तःपुर की ओर चल दिये। वे प्रसन्न थे। उनके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव थे।

जयचन्द का दरबार

राठौर वंश के कुलदीपक राजा जयचंद का दरबार लग रहा था। सेनापति सूर्यसिंह उठकर खड़ा हो गया और महाराज को अभिवादन करके कहने लगा—"पृथ्वीराज चौहान ने गजनी के बादशाह मुहम्मद गौरी को छोड़ दिया।"

"ऐं!"

"हाँ, महाराज! वह अपने सिपहसालार कुतुबुद्दीन ऐबक के साथ गजनी चला गया। उसने पृथ्वीराज से माफी मांग ली।"

"यह बहुत अच्छा हुआ, सूर्यसिंह। मैं यही चाहता था।"

"यही मौका है, महाराज! हारा हुआ मुहम्मद गौरी गजनी पहुँचे, तभी आपका दूत भी वहाँ पहुंच जाना चाहिए। आप पत्र मे यह लिखिए कि गौरी युद्ध की तैयारी करे। वह पृथ्वीराज पर चढाई कर दे। आप अपनी पूरी फौज लेकर युद्ध मे उसका साथ देंगे।"

"सूर्यसिंह, तुमने बहुत अच्छा सोचा। मैं यही करूँगा। मैं पृथ्वीराज का सर्वनाश देखना चाहता हूँ। मेरे कलेजे मे बदले की आग जल रही है। मैं···।"

अभी जयचन्द इतना ही कह पाये थे कि उनका महामंत्री उठकर खड़ा हो गया। उसने साहस बटोरकर जयचन्द से कहा—"महाराज, यदि आज्ञा हो, तो मै कुछ कहूँ?"

"हाँ, कहो, महामंत्री, तुम क्या कहना चाहते हो?"

"महाराज, अभी हमारे देश भारतवर्ष मे हिन्दू राज्य है। सदियों पहले महमूद गजनवी आता था। वह हमारे देश को लूटकर ले जाता था। उसने सतरह बार हमला किया। वह लुटेरा था, लुटेरा।"

"आखिर तुम कहना क्या चाहते हो, महामंत्री?"

"मेरा कहना यह है कि घर की फूट से बाहर वाला हमेशा फायदा

उठाता है। गोरी का इरादा भारत को गुलाम बनाना है। यहाँ वह इस्लाम लायेगा और उस धर्म का प्रचार करेगा। हम गुलाम हो जायेंगे। हमारी आजादी छिन जायेगी।"

"तुम्हारा मतलब क्या है, महामंत्री?"

इसपर महामंत्री तो बोलते-बोलते ही रह गया। एक वृद्ध दरबारी उठकर खड़ा हो गया। उसके मुँह से निकला—"विदेशी को देश में आने का निमन्त्रण मत दो, महाराज। मैं आपके हाथ जोड़ता हूँ। मैं—"

"मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता हूँ। मैं पृथ्वीराज से अपने अपमान का बदला लूँगा। मेरा हक पृथ्वीराज को दिया गया। यह कहाँ का निर्णय है कि छोटा भाई युवराज पद पर बैठे और बड़ा अपने अधिकार से वंचित हो जाए।"

अब महामंत्री से चुप नहीं रहा गया। वह हिम्मत करके फिर बोल उठा—"यह शिकायत आपको अपने नाना अनंगपाल से करनी चाहिए थी, महाराज। उन्होंने अजमेर और देहली का राज्य पृथ्वीराज चौहान को दिया। आपको कन्नौज का मालिक बनाया। आप दोनों मौसेरे भाई हैं। आप बड़े हैं और पृथ्वीराज छोटे। आपको चाहिए कि आप पृथ्वीराज को क्षमा कर दें।"

"कैसी बातें करते हो, महामंत्री। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि पाटन राज्य से हर साल मुझे सत्तर लाख मोहरें मिलतीं थीं। पृथ्वीराज ने उस राज्य को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। मेरी आमदनी बन्द हो गई। मैं पृथ्वीराज को कभी क्षमा नहीं करूँगा।"

महामंत्री उदास हो गया। उसके आँसू आ गये। वह बच्चों की तरह रोता हुआ बोला—"महाराज, मेरी प्रार्थना यही है कि देश को गुलाम मत होने दीजिए। भारत में हिन्दू राज्य रहे, इसके लिए हमको जान की बाजी लगा देनी चाहिए।"

"महामंत्री, यह राजनीति है। पृथ्वीराज ने मेरा बड़प्पन कभी नहीं माना। वह आज भी मुझे घृणा की दृष्टि से देखता है। मैं उसे चैन से नहीं बैठने दूँगा। मेरे मन में प्रतिशोध की आग जल रही है।"

मंत्री मौन हो गया। सेनापति सूर्यसिंह को मौका मिला। वह

मुस्कराया और धीरे से अपनी बात कहने लगा—"महाराज, मेरे मन में भी बदले की आग जल रही है। आपको मालूम है कि सम्राट् पृथ्वीराज चौहान ने मेरे पिता को अपने दरबार में बुलाया और वहाँ उनकी हत्या कर दी गई। उनपर राजद्रोह का झूठा अपराध लगाया गया था।"

"मालूम है, सूर्यसिंह, मैं इसे कभी नहीं भूल सकता। तुम मेरे सेनापति ही नहीं, किसी राजा के राजकुमार हो, जिसे युवराज पद पर बैठना चाहिए था। आज वह सेनापति है। इसका कारण पृथ्वी है, पृथ्वी।"

"महाराज, अगर आप मुझे शरण न देते, तो मैं कहाँ जाता ?"

"सूर्यसिंह, आदमी ही आदमी के काम आता है। यही इन्सानियत है। तुम्हारे पिता जालन्धर राज्य के स्वामी थे। वे बहुत ही सीधे और साधु पुरुष थे। उनका वध कर दिया गया। उनका राज्य हड़प लिया गया। चुप मत बैठो, सूर्यसिंह, बदला लो, बदला।"

सूर्यसिंह और जयचन्द में देर तक इसी तरह बातें होती रहीं। अन्त में यही निश्चय हुआ कि शीघ्र ही कन्नौज का दूत गजनी जायेगा। मुहम्मद गौरी को हिन्दुस्तान आने का निमन्त्रण दिया जायेगा। जयचन्द उसे पूरी-पूरी सैनिक सहायता देगा।

संयोगिता

राजकुमारी संयोगिता अपने कक्ष में बैठी गुनगुना रही थी। उसके दोनों हाथों में सम्राट् पृथ्वीराज चौहान का चित्र था। वह कहती—"तुम दिल्ली नरेश हो। तुम सम्राट् चौहान हो। तुम शब्दवेधी बाण चलाते हो। तुम इस कलियुग में अयोध्या के राजा दशरथ हो। मैं वारी जाऊँ। बोलो नाथ, कुछ तो बोलो। दासी तुम्हें बुला रही है।"

चित्र मौन था। संयोगिता अकुला उठी। उसने उस तस्वीर को वक्ष से लगा लिया। उसके मुँह से निकला। "तुम्हारी भुजाएँ फौलाद की बनी है, चौहान। तुमने गौरी को पराजित कर दिया। वह कौन-सा सोने का दिन होगा, जब इस दासी को तुम्हारे चरणों की रज मिलेगी? तुम···"

अभी संयोगिता इतना ही कह पाई थी कि पीछे से आकर उसे किसी ने टोक दिया। वह कह रहा था—"क्या सोच रही हो, बहन संयोगिता? किससे बातें कर रही हो?"

संयोगिता चौंककर रह गई। स्वर जाना-पहचाना था। उसने पीछे घूमकर देखा तो जोधमल खड़ा मुस्करा रहा था।

वह संयोगिता की धाय का पुत्र था और था कन्नौज शहर का कोतवाल। वह संयोगिता से बड़ा था। उसे छोटी बहन की तरह प्यार करता था। उसपर उसका स्नेह अटूट था :

संयोगिता उठकर खड़ी हो गई। उसने पृथ्वीराज का चित्र जोधमल के हाथ में दे दिया। फिर उसके वक्ष से लग गई और हँसती हुई धीरे से कहने लगी—"भैया मैं इनसे बातें कर रही थी। यह चित्र तुम्हीं तो लाए थे। तुम्हीं ने मुझे दिया था। पता नहीं, इनके दर्शन कब होंगे?"

इसपर जोधमल ने एक लम्बी साँस ली। वह ऊपर आकाश की ओर देखने लगा। उसके मुँह से दर्द-भरा स्वर निकला—"बहन संयोगिता, जो तुम सुन नहीं सकोगी, मैं तुम्हें वही सुनाने आया हूँ।

मैंने तो कलेजे पर पत्थर रख लिया है। मगर सोचता हूँ कि तुम्हारा हाल क्या होगा?"

"क्या हुआ, भइया?"

"सम्राट् चौहान ने गजनी के यवन को बुरी तरह हराया। फिर उसे क्षमा कर दिया। गौरी वापस लौट गया। लेकिन..."

"लेकिन क्या, भइया?"

"तुम्हारे पिता गौरी के पास निमंत्रण भेज रहे हैं। वे युद्ध के मैदान में पृथ्वीराज के खिलाफ गौरी को सैनिक सहायता देंगे। तुम्हें यही सुनाने आया था।"

"मैं ऐसा कभी नहीं होने दूंगी। पिताजी को रोकिये। यह अनर्थ है, महा अनर्थ।"

"उन्हें कोई भी रोक नहीं सकता, संयोगिता। उनपर बदले की भावना का भूत सवार है।"

"क्या दूत गजनी जा चुका है?"

"इस विषय में मुझे कोई भी जानकारी नहीं है।"

"क्यों?"

"सेनापति सूर्यसिंह और महाराज की राय एक है। महामन्त्री ने उनके इस प्रस्ताव का खूब खुलकर विरोध किया। मगर नतीजा कुछ भी नहीं निकला। योजना और उसके कार्य सभी गुप्त रखे गए हैं। फिर भी मैं पता लगाऊँगा कि अभी दूत गजनी गया है या नहीं।"

जोधमल और संयोगिता में इसी प्रसंग को लेकर देर तक बातें होती रहीं। कुछ देर बाद वहां रानी तिलका आ गई। आते ही वे संयोगिता की बलायें लेने लगीं और जोधमल से बोली—"भाई-बहन में क्या बातें हो रही हैं?"

दोनों हँस दिये। दोनों ने ही मन की बात नहीं बतलाई। जोधमल बोला—"महारानीजी, संयोगिता कह रही थी कि मेरे लिए आसमान के तारे तोड़ लाओ, भइया। यह मुझे ऐसे ही काम बतलाती है। बहुत नटखट हो गई है।"

अब संयोगिता रानी तिलका से लिपट गई। वह कह रही थी—

"बड़ी, माँ भइया झूठ कहते हैं। मैंने इनसे कुछ भी नहीं कहा। यह मुझे चिढ़ा रहे थे कि मैं दासी की पुत्री हूँ और महलों में राजकुमारी की तरह पाली जा रही हूँ।"

रानी तिलका को हँसी आ गई। उसने संयोगिता के कपोल पर एक हल्की-सी चपत जड़ी और प्रसन्नता के तीव्र आवेग से आलोड़ित होकर बोल उठी—"तुम दोनों बहुत ढीठ हो गये हो। जब देखो, तब लड़ते ही रहते हो। मैं पूछती हूँ—आखिर तुम्हारा यह बचपना कब जायेगा?"

अब जोधमल चौकी पर बैठ गया। रानी तिलका भी चाँदी की कुरसी पर आसीन हो गई थी।

संयोगिता महारानी के अंक में बैठी थी। वे उसके सिर पर स्नेह-पूर्वक हाथ फेरती हुई कह रही थी""कन्नौज के राजा को भगवान् ने औलाद नहीं दी। हम दोनों सन्तान न होने से दुःखी थे। दासी कम्मो मर गई। वह महाराजा की बहुत ही प्रिय थी। उसी से तेरा जन्म हुआ, बेटी। कहने को यह सत्य है कि तुम दासी-पुत्री हो परन्तु वास्तव में तुम मेरी आँखों की पुतली हो।"

रानी तिलका इस तरह बात कर रही थी, जोधमल और संयोगिता सुन रहे थे।

आगे तिलका ने कहा—"मेरे देवर थे रतिभान। वे महाराज के सगे भाई नहीं थे। उनका भी निधन हो गया। वे अपने पीछे अपना पुत्र लाखन छोड़ गये। आज वही मेरा बेटा है। आज वही कन्नौज का राजकुमार है। मुझे उस दिन महान हर्ष होगा, जब मेरी बेटी का स्वयंवर होगा, जब घर में लाखन की बहू आयेगी और मेरे आँगन में पायलों की झंकार होगी।"

रानी तिलका प्रसन्नता के प्रवाह में बही चली जा रही थी। उसे बोध ही नहीं हो पाया कि उसके सामने कब महाराज जयचन्द आकर खड़े हो गये हैं।

जब दम्पत्ति की आँखें चार हुईं, तो जयचन्द मुस्कराये और हँसकर कहने लगे—"आज महारानी को क्या हो गया है, जो बीती बातें याद

कर रही हैं ?"

"आज मैं बहुत खुश हूँ, नाथ। भाग्य ने मुझे बेटा दिया, बेटी दी। बस मुझे और कुछ नहीं चाहिए।"

जयचन्द दूसरी कुर्सी पर बैठ गये। संयोगिता और जोधमल दोनों वहाँ से चल दिये।

स्वयंवर की योजना

राजा जयचन्द को गुप्त सूत्रों से इस बात का पता चल चुका था कि राजकुमारी संयोगिता सम्राट् पृथ्वीराज चौहान से प्रेम करती है। उन्हें यह भी मालूम था कि उसके पास पृथ्वीराज का चित्र है।

जब से जयचन्द ने यह सुना, तभी से वे अपना धीरज खो बैठे थे। आखिर उनसे नहीं रहा गया। एक शाम को वे संयोगिता के महल में आये और उसकी गतिविधि का निरीक्षण करने लगे।

जयचन्द बिस्तर पर आकर बैठ गये और संयोगिता से पूछने लगे—"बेटी, मैंने सुना है कि तुम्हारे पास पृथ्वीराज का चित्र है और तुम चौहान के साथ ब्याह करना चाहती हो। यह यहाँ तक सत्य है, संयोगिता? मुझे बताओ।"

संयोगिता तनिक भी विचलित नहीं हुई। जैसे वह उत्तर देने के लिए तैयार बैठी हो। तत्क्षण ही कहने लगी—"आपने ठीक सुना है, पिताजी। मैं आपसे झूठ नहीं बोलूँगी।"

"क्या तुम्हें मालूम नहीं कि पृथ्वीराज मेरा दुश्मन है?"

"यह शत्रुता आपने पाली है। मैं इसे अच्छा नहीं समझती। आपस की फूट और आपस की लड़ाई घर को बर्बाद कर देती है।"

"मैं तुम्हारा ब्याह पृथ्वीराज के साथ कभी नहीं करूँगा।"

"मत कीजिए। आप पिता हैं। आपका मुझपर पूर्ण अधिकार है। मगर एक बात मेरी भी सुन लीजिए।"

"क्या?"

"यदि चौहान के साथ मेरा पाणिग्रहण न हुआ, तो मैं अपने प्राणों पर खेल जाऊँगी। मेरा यह दृढ़ निश्चय है।"

"तुम्हारी इस धमकी से मैं भयभीत होने वाला नहीं हूँ, संयोगिता! मैं जो उचित समझूँगा, वही करूँगा।"

"तो फिर एक काम कीजिए पिताजी।"

"क्या ?"

"मुझसे यह कटार लीजिए और मेरे सीने में भोंक दीजिए। बस फिर न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी।"

"तुम पागल हो गई हो, बेटी। तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। तुम्हें कैसे समझाऊँ ?"

यह कहते हुए जयचन्द वहाँ से चल दिये। वे बड़बड़ा रहे थे। उनका क्रोध सीमा को पार कर रहा था। इसीलिए अधीर थे।

रानी तिलका तुलसी की पूजा कर रही थी। जयचन्द उसके पीछे जाकर खड़े हो गये। जब पूजन समाप्त हो गया, तो तिलका का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हुए क्रोध-भरे स्वर में बोले—"महारानी तुम्हारे महल में क्या हो रहा है। तुम्हें इसकी कोई भी खबर नहीं।"

"क्या हुआ, आर्यपुत्र ? तुम गुस्सा क्यों हो रहे हो ?"

जयचन्द ने एक साँस में तिलका को सारा हाल बतलाया। वह भी अवाक् रह गई।

दम्पति कक्ष में आकर बैठ गये और उनमें परस्पर वार्ता चलने लगी।

रानी तिलका का कहना था कि मैं संयोगिता से बात करूँगी। किन्तु जयचन्द ने इसके लिए मना कर दिया।

जयचन्द का कथन इस तरह था कि संयोगिता को समझाना अपने हाथ दीवार पर पटकना है। वह कभी नहीं मानेगी। वह जान देने के लिए तैयार है।

कुछ देर बाद जयचन्द के मुँह से निकला—"मैंने एक बहुत ही बढ़िया उपाय सोचा है, महारानी !"

"क्या ?"

"संयोगिता का स्वयंवर करूँ। इसके लिए देश के सभी राजाओं को निमन्त्रण भेजूँ।"

"वाह प्राणनाथ ! नेकी और पूछ-पूछ। यही करो। यही सबसे उत्तम मार्ग है।"

"एक बात और पूछना चाहती हूँ।"

"क्या ?"

"क्या पृथ्वीराज को भी निमन्त्रण भेजा जायेगा ?"

"हाँ, अवश्य।"

"किन्तु पृथ्वीराज तो तुम्हारा शत्रु है।"

"वह शत्रु है, यह सत्य है। मगर वह राजओं का राजा और भारतवर्ष का सम्राट् है। उसे निमंत्रण देना होगा। यह बहुत आवश्यक है।"

"मेरी राय यह है कि पृथ्वीराज को स्वयंवर का निमंत्रण न दिया जाए।"

"क्यों ? '

"इसलिए कहती हूँ कि जब पृथ्वीराज स्वयंवर में नहीं आयेंगे, तो संयोगिता विवश होकर किसी अन्य राजा को जयमाला पहनायेगी।"

"तुम अभी समझी नहीं, महारानी कि मैं पृथ्वीराज को निमंत्रण क्यों देना चाहता हूँ ?"

"मैं नहीं समझी, आर्यपुत्र।"

"तो अब समझ लो।"

"क्या ?"

"मैं पृथ्वीराज को निमंत्रण भेजूँगा। उसके साथ मेरा पत्र होगा। उस पत्र में यह लिखा जायेगा कि मैंने स्वयंवर के समारोह में सम्राट् पृथ्वीराज चौहान को द्वारपाल का पद दिया है। वे इस पद को स्वीकार कर लें और स्वयंवर में आएँ।"

"ऐसा मत कीजिए, नाथ, ऐसा मत कीजिए।"

"क्यों, महारानी ?"

"ऐसा करने से दबी हुई चिनगारी भड़क उठेगी। वह चिनगारी शोला बनेगी। पृथ्वीराज को निमत्रण मत दीजिए, मत दीजिए।"

"इसके लिए मुझे कोई भी मना नहीं कर सकता है, महारानी। मैंने स्वयंवर में पृथ्वीराज को नीचा न दिखलाया, तो मेरा नाम जयचन्द नहीं

"ईश्वर, रक्षा करो। आर्यपुत्र को सुबुद्धि दो। यह जो अनर्थ होने जा रहा है, इसे रोक लो, भगवान्।"

तिलका ने माथे पर दोनों हाथ रख लिये। वे गहरी चिन्ता में डूब गई। जयचन्द वहाँ से चले गए। उसे बोध भी नहीं हो पाया।

जब देर बाद रानी तिलका का चित्त कुछ स्थिर हुआ, तो उसने दासी को भेजकर युवराज लाखन को बुलवाया।

तिलका ने लाखन को सारी परिस्थिति भली भाँति समझा दी। फिर जोर देकर बोली—"राठौर नरेश का मस्तिष्क बदले की भावना से विकृत हो गया है, उन्हें अनर्थ करने से रोको, बेटा। यह तो वही बात हुई। जैसी मिसाल कही जाती है कि आ बैल, मुझे मार।"

लाखन ने अपनी धर्म-माता को पूर्ण आश्वासन दिया। वह चला गया। तिलका फिर चिन्तन में खो गई।

आखिर उससे अपने कक्ष में बैठा नहीं रहा गया। वह उठकर खड़ी हो गई और उसके पैर अपने-आप ही संयोगिता के कक्ष की ओर उठने लगे।

निमन्त्रण

रानी तिलका ने संयोगिता को बहुत समझाया, किन्तु राजकुमारी नही मानी। वह अपनी हठ पर अडी रही।

लाखन ने भी धर्म-बहन के नाते संयोगिता को सब कुछ समझाया। अन्धकारमय भविष्य की ओर भी संकेत किया। लेकिन संयोगिता पर कोई भी प्रभाव नही पडा। वह अपनी ही कहती रही।

राजा जयचन्द ने दरबार मे सभी सभासदों के सामने स्वयंवर वाली योजना रखी। सभी ने उस योजना को स्वीकार किया। सभी ने उसका स्वागत किया।

एक बूढे सभासद ने इस योजना का विरोध किया। उसका कहना था कि आप स्वयवर शौक मे कीजिए, लेकिन पृथ्वीराज का अपमान करना यह कहाँ का इन्साफ है। बैठी हुई बर्र उकसाओगे? पृथ्वीराज कन्नौज की ईंट से ईंट बजा देगा। वह सम्राट् है और तुम राजा, यह कभी मत भूलो।

यह बूढा सभासद रायमल था। राजा जयचन्द का यह सगा चाचा था, किन्तु उमर मे कुछ ही बडा।

जयचन्द ने रायमल की ओर देखा। वे उदास हो गये और खीझकर कहने लगे—"यह आप क्या कह रहे है, चाचाजी?" बेटा जयचन्द, राजा को राजनीति से काम लेना चाहिए। विश्व की यही परम्परा है। तुम भी इसका पालन करो। अगर निमन्त्रण भेजना चाहते ही हो, तो पृथ्वीराज को भेज दो।

"मैं निमन्त्रण अवश्य भेजूंगा।"

"पर यह निमन्त्रण भी उसी तरह का होगा, जैसा सभी राजाओं को जायेगा। जानते हो, जयचन्द, पृथ्वीराज स्वयवर मे कभी नही आयेगा। तुम्हारा कर्तव्य भी पूरा हो जायेगा। इस तरह न तो लाठी टूटेगी और

न साँप मरेगा। निर्विघ्न स्वयंवर हो जायेगा और आपसी झगड़ा भी नहीं होगा।"

"आपकी बातों पर विचार करूँगा, चाचाजी। अभी मुझे सोचने का मौका दीजिए।"

रायमल की समझ में अच्छी तरह आ गया कि जयचन्द पर उनकी बातों का कोई भी असर नहीं पड़ा। वे मौन हो गये।

दूसरे दिन निमन्त्रण भेजे जाने लगे। हर राज्य के राजा को यह न्योता दिया गया।

एक विशेष दूत को देहली भेजने के लिए बुलाया गया।

जयचन्द ने अपने हाथों से इस दूत को पत्र और निमन्त्रण दिया। वे बोले—"इस पत्र का तुम्हें उत्तर लाना है, दूत।" यदि पृथ्वीराज टालमटोल करे, तो यही कहना कि मुझे पत्र का उत्तर चाहिए। मैं जवाब लेकर ही वापस जाऊँगा।"

राजधानी में इस बात की चर्चा जोर पकड़ गई कि राजा जयचन्द अपनी बेटी संयोगिता का स्वयंवर कर रहे हैं। इसमें देश के सभी राजा आयेंगे। इसीलिए स्वयंवर के लिए बहुत बड़ी रंगभूमि बनाई जा रही है।

प्रजा में उमंग आ गई। लोगों में उत्साह हिलोरे लेने लगा।

देहली जाने वाला दूत अरबी घोड़े पर सवार था। उसे यह विशेष घोड़ा इसलिए दिया गया था कि कन्नौज से देहली तक का मार्ग जल्दी ही तय हो जाए।

दूत सोचता आ रहा था कि मैं शेर की माँद में जा रहा हूँ। उसके दरवाजे पर जाकर यह कहूँगा कि मैं तुम्हारे दाँत तोड़ने के लिए आया हूँ। शेर गुर्रायेगा। उसे गुस्सा आयेगा। ऐसा भी हो सकता है, सम्राट् पृथ्वीराज मेरा सिर धड़ से अलग कर दे।"

दूत को अब देहली की गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ दिखलाई पड़ने लगी थी। उसके हृदय की धड़कन तीव्र हो गई।

दोपहर बीत चुकी थी। तीसरे पहर दूत ने देहली नगर में प्रवेश किया। वह नौबतखाने में पहुँचा। वहाँ सूचना दी कि वह कन्नौज से

आया है और राजा जयचन्द का निमन्त्रण लाया है।

सम्राट् को समाचार मिला। उन्हें आश्चर्य हुआ। उनका अन्तःकरण कहने लगा कि जयचन्द तो मुझे अपना शत्रु समझता है फिर उसने निमंत्रण क्यों भेजा ?

सम्राट् का मन कह रहा था कि इसमें अवश्य कोई राज है। वे मन्द-मन्द मुस्कराये और धीरे से द्वारपाल से बोले—कन्नौज के दूत को सम्मान के साथ दरबार में ले आओ।" "जो आज्ञा, महाराज!"

द्वारपाल चला गया। पृथ्वीराज ने चन्द्र कवि की ओर देखा। उनकी खामोश निगाहें अपने मित्र से पूछ रही थीं कि राजा जयचन्द ने मुझे निमन्त्रण क्यों भेजा है ?

चन्द्र कवि भी हैरान था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि यह सब क्या है और भविष्य में क्या होने वाला है।

पत्र पर पत्र

कन्नौज के दूत ने चौहान के दरबार में प्रवेश करते ही झुककर सम्राट् को अभिवादन किया।

सम्राट् ने धीरे से पूछा—कहो दूत, क्या समाचार लाये हो?"

"महाराज की जय हो। हमारे राजा जयचन्द ने आपको निमन्त्रण भेजा है।"

"कैसा निमन्त्रण, दूत?"

"राजकुमारी संयोगिता का स्वयंवर है। उसमें आपकी उपस्थिति अनिवार्य है।"

यह कहने के साथ दूत ने पत्र और निमन्त्रण सम्राट् के आगे बढ़ा दिया। पृथ्वीराज से चन्द्र कवि ने कहा—मित्र चन्द्रवरदाई। पढ़ो, देखो, इस पत्र में क्या लिखा है?"

चन्द्र कवि ने जयचन्द का पत्र अपने हाथ में लिया। सभी सभासद सजग हो गये। सभी के कान खड़े थे। दरबारियों को आश्चर्य हो रहा था कि राजा जयचन्द पृथ्वीराज के दुश्मन है, फिर उन्होंने अपनी बेटी के स्वयंवर का निमन्त्रण यहाँ क्यों भेजा?"

चन्द्र कवि ने पत्र पढ़ना आरम्भ किया। उसमें लिखा था—सम्राट् पृथ्वीराज चौहान को मैं अपनी बेटी संयोगिता के स्वयंवर का निमन्त्रण भेज रहा हूँ। मैंने आपको इस समारोह में द्वारपाल के पद पर नियुक्त किया है। मुझे आशा है कि आप इस सेवा को अवश्य स्वीकार करेंगे और यहाँ आकर रंगभूमि की शोभा बढ़ायेंगे।"

"यह पत्र नहीं, जहर का बुझा हुआ तीर है चन्द्रकवि। यह निमन्त्रण नहीं, मेरे ऊपर सरासर कीचड़ उछाला गया है।"

पृथ्वीराज ने यह कहकर दूत की ओर देखा। वे उससे बोले—दूत, तुम जाओ। विश्राम करो। कल तुम्हें इस पत्र का उत्तर दे दिया जायेगा।

द्वारपाल कन्नौज के दूत को ससम्मान ले जाओ।"

जब दूत चला गया तो पृथ्वीराज ने चामुण्डराय की ओर देखा। उनके मुँह से निकला—"जयचन्द को ईंट का जवाब पत्थर से दिया जायेगा सेनापति। इस पत्र को चन्द्र कवि फाड़कर फेंक दो। अब दूत को क्या जवाब दिया जायेगा, उसका निर्णय होना है।"

सम्राट् की यह बात सुनते ही उनके बहनोई चित्तौड़ के राजा समरसिंह बोल उठे—"चौहान, यह समय क्रोध करने का नहीं है तुम्हें समझ से काम लेना चाहिए। तुम्हें शक्ति-सचय करना है मुझे गौरी पर तनिक भी भरोसा नही। वह भारत पर फिर हमला कर सकता है। इसलिए उलझो मत। युक्ति से काम लो।"

"कैसी युक्ति, जीजाजी ?"

"दूत को जवाब दे दो कि तुम कन्नौज आने में असमर्थ हो। गजनी का मुहम्मद गौरी हिन्दुस्तान पर फिर हमला करने वाला है। तुम सेना के सगठन में लगे हो। तुम्हे अवकाश नही है।"

"यह उत्तर दिया जायेगा।"

"हाँ, यह उत्तर उचित है।"

यह कहकर चन्द्र कवि ने राजा समरसिंह का समर्थन किया।

पृथ्वीराज देर तक मौन रहे। फिर वे चन्द्र कवि से कहने लगे—"मित्र चन्द्रवरदाई, यह काम तुम्हें ही करना होगा। मैं लिखित उत्तर देने के पक्ष में नहीं हूँ। तुम जाकर दूत को समझा दो।"

"जो आज्ञा, सम्राट्।"

पृथ्वीराज का मन खराब हो गया था। फिर वे दरबार में नहीं बैठे। वहाँ से उठकर रंगमहल की ओर चल दिये। रास्ते में वे सोचते जा रहे थे कि राजा जयचन्द उनकी जिन्दगी के लिए एक नासूर बन गया है

× × ×

सवेरा होते ही चन्द्र कवि ने कन्नौज के दूत को उत्तर दे दिया। वह जवाब पाकर कन्नौज के लिए रवाना हो गया।

दूसरे दिन चौहान का दरबार फिर लगा। उसमें यही चर्चा चलती रही कि जयचन्द से इस अपमान का बदला किस तरह लिया जाए। यह

चींटी है, चींटी और उसने हाथी से टक्कर लेने की सोची है।

कोई कुछ कहता और कोई और कोई कुछ; लेकिन राजा समरसिंह का निरन्तर यही कहना था कि आपस के झगड़े से बचो। इसमें शक्ति का नाश होगा। विदेशी यवन फिर आक्रमण कर सकता है। उसके लिए तैयार रहो।

किन्तु पृथ्वीराज अभी तक कुछ भी निश्चय नहीं कर पाये थे कि उन्हें क्या करना चाहिए।

दिन पर दिन बीतने लगे। स्वयंवर की तिथि निकट आती जा रही थी।

एक दोपहर को दरबार लगा था तभी सम्राट् को सूचना मिली कि कन्नौज से जोधमल आये हैं। वे सम्राट् से मिलना चाहते हैं। वे राजकुमारी संयोगिता का पत्र लाये हैं। और उसे सम्राट् के हाथों में देना चाहते हैं।

पृथ्वीराज ने यह सुना तो उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उनका अन्तःकरण कहने लगा कि राजकुमारी संयोगिता ने शायद अपने लिए उनसे सहयोग की माँग की है।

सम्राट् ने आज्ञा दी। वे बोले—"दूत को आदर के साथ दरबार में ले आओ। मैं जानना चाहता हूँ कि ये जोधमल कौन हैं और यहाँ क्यों आये हैं।"

कुछ ही देर में जोधमल सम्राट् के सामने आ गया। उसने सम्मान के साथ भारत सम्राट् को प्रणाम किया।

सम्राट् ने पूछा—कहो, भाई जोधमल, यहाँ कैसे आये ?"

"मैं कन्नौज की राजकुमारी संयोगिता का पत्र श्रीमान जी की सेवा में लाया हूँ।"

"लाओ, कहाँ है पत्र ?"

"यह रहा महाराज।"

जोधमल ने संयोगिता का पत्र पृथ्वीराज के हाथ में दे दिया। वह सिर झुकाये खड़ा था। उसकी मुद्रा इस बात की प्रतीक थी कि वह प्रसन्न है और उसे यहाँ आने की खुशी है।

आग में घी

दूसरे दिन दरबार लगने पर राजकुमारी संयोगिता का पत्र पढ़ा गया। उसमे लिखा था—"भारत सम्राट् की जय हो। यह दासी आपको प्रणाम करती है। आपको मालूम होना चाहिए कि मेरे पिता ने मेरा स्वयंवर रचाया है। यदि आप स्वयंवर मे न आये, तो मैं जीवित नही रहूँगी। मैंने मन, कर्म और वचन से आपको अपना पति स्वीकार कर लिया है। मेरी रक्षा कीजिए। मैं स्वयंवर की जयमाल आपके गले में ही डालूँगी।"

पत्र सुनकर पृथ्वीराज मौन हो गये। दरबार में भी सन्नाटा छाकर रह गया था।

अभी सम्राट् विचारमग्न ही थे कि तब तक जोधमल ने दरबार में प्रवेश किया।

सम्राट् ने जोधमल से पूछा—"कन्नौज का क्या समाचार है, जोधमल ?" "महाराज, कुछ न पूछिये। क्या बतलाऊँ ? हमारे राजा जयचन्द की बुद्धि पर पत्थर पड़ गये हैं। उन्होने आपकी सोने की एक बड़ी-सी प्रतिमा बनवाई है। यह मूर्ति रंगभूमि द्वार पर रखी गई है। आप को द्वारपाल बनाया गया है।" "राजा जयचन्द का यह साहस ? मैं उसके अभिमान को मिट्टी में मिला दूँगा, जोधमल। राजकुमारी से कहना कि वे निश्चिन्त रहें। उनकी रक्षा होगी। जिस तरह उन्होंने मुझे अपना पति स्वीकार किया है, वैसे ही मैं भी उन्हें पत्नी-रूप मे स्वीकार करता हूँ। उनकी रक्षा होगी और यह कार्य मैं स्वयं करूँगा।"

जोधमल दरबार से रवाना हो गया। पृथ्वीराज ने समरसिंह की ओर देखा और क्रोध-भरे स्वर मे कहने लगे—"जीजाजी, राजा जयचन्द मेरा अपमान पर अपमान करते चले जा रहे है। पहले जहर-भरा पत्र भेजा। आज सुनने को मिला कि द्वारपाल के पद पर मेरी मूर्ति खड़ी की

सम्राट् ने जोधमल से उसका परिचय प्राप्त किया। उसने स्पष्ट बतला दिया कि वह राजकुमारी सयोगिता की धाय का पुत्र है। वह उसका दूध-भाई है। उसकी आज्ञा से पत्र लेकर यहाँ आया है। राजकुमारी ने उसे चोरी-चोरी देहली भेजा है।

सम्राट् ने जोधमल को अतिथि-गृह मे भेज दिया। उनका कहना था कि आज तुम आराम करो, जोधमल। कल पत्र का उत्तर लेकर चले जाना।

आग में घी

दूसरे दिन दरबार लगने पर राजकुमारी संयोगिता का पत्र पढ़ा गया। उसमे लिखा था—"भारत सम्राट् की जय हो। यह दासी आपको प्रणाम करती है। आपको मालूम होना चाहिए कि मेरे पिता ने मेरा स्वयंवर रचाया है। यदि आप स्वयंवर मे न आये, तो मैं जीवित नही रहूँगी। मैंने मन, कर्म और वचन से आपको अपना पति स्वीकार कर लिया है। मेरी रक्षा कीजिए। मैं स्वयंवर की जयमाल आपके गले मे ही डालूँगी।"

पत्र सुनकर पृथ्वीराज मौन हो गये। दरबार में भी सन्नाटा छाकर रह गया था।

अभी सम्राट् विचारमग्न ही थे कि तब तक जोधमल ने दरबार में प्रवेश किया।

सम्राट् ने जोधमल से पूछा—"कन्नौज का क्या समाचार है, जोधमल ?" "महाराज, कुछ न पूछिये। क्या बतलाऊँ ? हमारे राजा जयचन्द की बुद्धि पर पत्थर पड़ गये है। उन्होने आपकी सोने की एक बड़ी-सी प्रतिमा बनवाई है। यह मूर्ति रंगभूमि द्वार पर रखी गई है। आप को द्वारपाल बनाया गया है।" "राजा जयचन्द का यह साहस ? मैं उसके अभिमान को मिट्टी मे मिला दूँगा, जोधमल। राजकुमारी से कहना कि वे निश्चिन्त रहें। उनकी रक्षा होगी। जिस तरह उन्होने मुझे अपना पति स्वीकार किया है, वैसे ही मैं भी उन्हें पत्नी-रूप मे स्वीकार करता हूँ। उनकी रक्षा होगी और यह कार्य मै स्वयं करूँगा।"

जोधमल दरबार से रवाना हो गया। पृथ्वीराज ने समरसिंह की ओर देखा और क्रोध-भरे स्वर में कहने लगे—"जीजाजी, राजा जयचन्द मेरा अपमान पर अपमान करते चले जा रहे है। पहले जहर-भरा पत्र भेजा। आज सुनने को मिला कि द्वारपाल के पद पर मेरी मूर्ति खड़ी की

गई हैं। आखिर क्या करूँ ?"

"धीरज से काम लो, सम्राट्। संयोगिता की रक्षा करना आवश्यक है। इसके लिए एक अकेले तुम्हें ही नहीं, हम लोगों को भी साथ चलना होगा। यह निश्चित है कि संयोगिता जयमाल मूर्ति को ही पहनायेगी। ठीक उसी समय उसका अपहरण कर लिया जायेगा। जयचन्द चौंककर रह जायेंगे। उनके पैरों के नीचे से जमीन निकल जायेगी।"

"आपने यह ठीक सोचा। मुझे तसल्ली हो गई। मेरी आधी चिन्ता दूर हो गई"

"और सुनो, सम्राट्!"

"क्या ?"

"जयचन्द के लिए सबसे बड़ा दण्ड यही है कि तुम उसकी बेटी का हरण कर लाओगे, उसे अपनी राजरानी बनाओगे।"

सेनापति चामुण्डराय दोनों की बातें सुन रहा था। उसने भी अपना मत प्रकट किया। वह कहने लगा—"मैं, चन्द्रकवि और समरसिंह तीनों सम्राट् के साथ छाया की तरह रहेंगे। हम अंगरक्षक के रूप में होंगे, ताकि सम्राट् का कुछ भी अनिष्ट न हो। इसके अलावा हमारे वेश बदल जायेंगे। अन्त तक कन्नौज में हमें कोई भी नहीं पहचान पायेगा।"

"बहुत खूब, बहुत खूब, सेनापतिजी। तुमने मेरी तबीयत खुश कर दी।"

सम्राट् ने यह कहकर अपने सेनापति की भूरि-भूरि प्रशंसा की। तभी राजा समरसिंह फिर बोल उठे—"मेरी राय है कि सेनापति चामुण्डराय अपने साथ पच्चीस हजार सैनिक लेकर कन्नौज के लिए रवाना हो जायें। उस सेना में एक सिपाही भी पैदल नहीं होगा। सब-के-सब घुड़सवार होंगे। यह सेना नगर से दूर पड़ाव करेगी। इसका आभास भी जयचन्द को न होने दिया जायेगा।"

समरसिंह की बातें सबके कानों में ऐसी उतर रही थीं कि जैसे ताल का बहता हुआ पानी।

सम्राट् की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं था। वे खुशी से फूले नहीं रहे थे।

अब चामुण्डराय ने भी अपनी बात कहनी आरम्भ कर दी। वह बोला—"जैसे ही राजकुमारी आपके गले में जयमाल डाले, सम्राट्, ठीक तभी आप उसे उठाकर घोड़े पर बैठ जायें। आपका घोड़ा हवा से बातें करेगा। आप पीछे घूमकर भी नहीं देखोगे। आपके साथ चन्द्रकवि रहेंगे। और पीछे-पीछे अश्वारोही के रूप में मैं तथा राजा समरसिंह।"

"वाह चामुण्डराय, वाह!"

सम्राट् ने यह कहकर अपने सेनापति की तारीफ की। ऐसे में ही राजा समरसिंह के मुंह से भी निकल गया—"आखिर चामुण्डराय सेनापति किसके हैं। जैसा सम्राट्, वैसा सेनापति।"

योजना पूर्ण रूप से बना ली गई थी। यह भी निश्चित हो गया कि दो दिन बाद ही चौहान के सेनापति पच्चीस हजार सैनिक लेकर कन्नौज के लिए रवाना हो जायेंगे।

स्वयंवर

कन्नौज नगर खूब सजाया गया था। स्वयंवर की रंगभूमि देखते ही बनती थी। राजाओं के बैठने के लिये अलग-अलग पीठिकाएँ बनी थीं। उनके विश्राम के लिये सुखद तथा रमणीक आवास बनाये गये थे।

रंगभूमि के द्वार पर सम्राट् पृथ्वीराज चौहान की स्वर्ण-प्रतिमा स्थापित की गई थी। उन्हे द्वारपाल का पद मिला था।

देश के प्रत्येक भूभाग से नरेश आने लगे। उनका स्वागत किया जाता, उनके सुख और सुविधाओं की पूर्ण व्यवस्था थी।

संयोगिता को भी जोधमल ने आश्वासन दे दिया था कि सम्राट् स्वयंवर में आयेंगे। वे उसकी रक्षा करेंगे। किन्तु फिर भी वह चिन्तित थी और सोच रही थी कि भविष्य में ऊँट न जाने किस करवट बैठेगा।

स्वयंवर की तिथि निकट आ गई थी। अब केवल दो ही दिन शेष रह गये थे। लगभग सभी निमन्त्रित राजा आ चुके थे।

वह दिन भी आ गया, जब संयोगिता को किसी के गले मे अपनी जयमाल डालनी थी।

प्रभात में सूर्य की प्रथम किरण फूटते ही रंगशाला मे नौबत बजने लगी। सभी राजा आ-आकर अपनी पीठिकाओं पर बैठने लगे। जब सभी नरेश आ गये, तो जयचन्द ने अपने सेनापति सूर्यसिंह को आज्ञा दी कि राजकुमारी संयोगिता को रंगभूमि में लाया जाए।

कुछ ही देर में संयोगिता सखियों के साथ स्वयंवर भूमि में आ गई। सहेलियाँ मंगल गीत गा रही थीं।

जयचन्द ने आगे बढ़कर अपना वरद् हस्त पुत्री के सिर पर रख दिया। वे बोले—"बेटी ! आज तुम्हारा स्वयंवर है। देश के सभी नृप आये हैं। तुम्हारी जिसे इच्छा हो, उसके गले में जयमाला पहना दो।"

यह कहने के साथ जयचन्द ने फूलों की बड़ी-सी जयमाल संयोगिता

के हाथ में दे दी।

संयोगिता आगे बढ़ी। भाट लोग उसके आगे-आगे चल रहे थे व राजाओं का नाम लेते तथा उनके वंश का परिचय देते।

संयोगिता के हाथों में जयमाल काँप रही थी। उसकी आँखों में सम्राट् पृथ्वीराज चौहान की प्रतीक्षा थी। उसका अन्तःकरण कहता कि अगर पृथ्वीराज न आये, तो वह अपने प्राणों का अन्त कर देगी।

सवेरे से दोपहर हो गई, किन्तु संयोगिता ने किसी को भी जयमाल नहीं पहनाई। राजा जयचन्द की घबराहट बढ़ने लगी। वे उसके पास आये और अधीर होकर व्यस्त स्वर में कहने लगे—"बेटी किसी को भी जयमाल पहना दो, जिसे तुम्हारा मन हो।"

संयोगिता निराश हो चुकी थी। उसका मन कहने लगा कि शायद अब सम्राट् चौहान नहीं आयेंगे। इसीलिये वह रंगभूमि के द्वार की ओर चल दी। जयचन्द पुत्री के पीछे-पीछे चल रहे थे।

संयोगिता ने पृथ्वीराज की स्वर्ण-प्रतिमा को नमस्कार किया और दोनों हाथों से जयमाल मूर्ति के गले में डाल दी।

राजा समरसिंह, पृथ्वीराज और चामुण्डराय फाटक पर भेष बदले हुए टहल रहे थे। वे संयोगिता और जयचन्द की गतिविधि देख रहे थे।

जयचन्द जोर से चिल्लाये—"तूने यह क्या किया, मूर्ख लड़की ? द्वारपाल को जयमाल पहना दी !"

"पिताजी ! स्वयंवर में जयमाल पहनाने का अधिकार मुझे है। मैं···।"

अभी संयोगिता इतना ही कह पाई थी कि जयचन्द ने दाँत पीसे। वे कठोर स्वर में कहने लगे—"यह जयमाल द्वारपाल के गले से उतार लो, संयोगिता। किसी अन्य राजा को पहना दो।"

"मुझसे यह नहीं होगा, पिताजी।"

"मेरी अवज्ञा करती है, नादान ?"

"मैं विवश हूँ, पिताजी।"

"मेरी आँखों में खून उतर आया है, संयोगिता। यदि तूने मेरा कहना न माना, तो इसी रंगभूमि में तेरी हत्या कर दूँगा।"

"मुझे प्राणों का मोह नही है, पिताजी।"

"मुझसे जबान लड़ाती है। मैं कहता हूँ कि जयमाल उतारो, संयोगिता।"

"यह कभी नही होगा, पिताजी।"

"तो फिर मौत के लिये तैयार हो जा।"

"मैं तैयार हूँ।"

"तेरा यह साहस ?"

कहकर जयचन्द ने म्यान से तलवार बाहर निकाल ली। वे संयोगिता पर वार करना ही चाहते थे, तब तक पृथ्वीराज उनके सामने आ गये। वे धिक्कारते हुए कटु स्वर में जयचन्द से बोले—"क्या यही क्षत्रिय-धर्म है कि लड़की पर हाथ उठाओ। खबरदार! जो संयोगिता पर तलवार चलाई। अब वह मेरी धर्मपत्नी है।"

जयचन्द ने भेष बदले हुये पृथ्वीराज को देखा, तो उनके तन-बदन में आग लग गई। वे ललकारकर बोले—"खबरदार, दुश्मन! सावधान हो जा। मेरी तलवार तेरा ही खून पीने की राह देख रही थी।"

यह कहने के साथ जयचन्द ने जैसे ही पृथ्वीराज पर तलवार का वार किया, ठीक तभी पृथ्वीराज ने पैंतरा बदला और संयोगिता को दोनों बाँहों पर उठाकर अलग हट गये।

अब समरसिंह और चामुण्डराय ने जयचन्द को घेर लिया। छिपे हुये पृथ्वीराज के सभी सैनिक प्रगट हो गये। सभी के हाथों में नंगी तलवारें थी।

जयचन्द चारो ओर से घिर गये थे। वे गला फाड़कर बुरी तरह चिल्लाये—"पकड लो इस बदमाश चौहान को। इसका वध कर दो। यह मेरी इज्जत से खेलने आया है।"

लेकिन तब तक पृथ्वीराज संयोगिता को लेकर आगे बढ़ गये। स्वयंवर भूमि से कुछ दूरी पर चन्द्रकवि दो घोडे लिये तैयार खड़े थे। एक पर पृथ्वीराज संयोगिता के साथ बैठ गये और दूसरे पर चन्द्र कवि सवार हो गये।

बात की बात मे दोनो घोडे हवा से बाते करते हुए सभी की दृष्टि से

ओझल हो गये।

चामुण्डराय तथा समरसिंह सेनापति थे। चौहान की सेना युद्ध कर रही थी।

स्वयंवर की रंगभूमि रणभूमि बन गई। तीर चलते, तलवारें छप-छप करतीं। खून की नदी बह चली। लाशो पर लाशें पटने लगीं।

चौहान के सैनिको ने कन्नौज की सेना को इतना अवसर नही दिया कि वे पृथ्वीराज का पीछा करते।

देर तक युद्ध रहा। जब देहली के सैनिकों ने देखा कि उसके सम्राट् काफी दूर निकल गये हैं तो वे भी घोड़ो पर सवार हुए और राजधानी देहली की राह ली।

जयचन्द ठगे से रह गये। वे होठ चबाते, दांत पीसते, मगर अब हो ही क्या सकता था? वे बाजी हार चुके थे।

जयचन्द अपने महल मे आ गये। वे पृथ्वीराज से इस अपमान का बदला लेने की सोचने लगे। स्वयवर में जितने भी राजा आये थे वे सब उठ-उठकर चल दिये। कन्नौज नगर में जो खुशी की लहर दौड़ रही थी वह विषाद में बदल गई।

राजमहल मे उदासी छाकर रह गई थी। रानी तिलका को भी महान दुःख था।

अगमा और संयोगिता

सम्राट् पृथ्वीराज चौहान संयोगिता को लेकर चन्द्र कवि के साथ सकुशल देहली पहुँच गये। राजरानी अगमा ने पति का भव्य स्वागत किया।

संयोगिता को रानी अगमा ने अपने हाथों लहरपटोर पहनाई। उसने हँसकर उसके गले में नौलखा हार डाल दिया।

दोनों एक-दूसरी को पाकर बहुत प्रसन्न थीं। अगमा के मुँह से निकला—"तुम्हारा सपना साकार हो गया, संयोगिता। मुझे इसका महान हर्ष है।"

"हाँ, बड़ी रानी! मैं भी इसे अपना सौभाग्य समझती हूँ।"

'तुम्हारे पिता को सम्राट् चौहान का ऐसा अपमान नहीं करना चाहिये था। तुम्ही बताओ कि जो भारत-सम्राट् हो, उसे द्वारपाल का पद दिया जाये, यह सरासर अपमान नहीं तो, और क्या है?"

"इसके लिये मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ, बड़ी रानी।"

"इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, संयोगिता। विनाश का भूत राजा जयचन्द पर सवार है। वही सब करवा रहा है। मुझे फिर कहना पड़ता है कि घर की फूट अच्छी नहीं होती। इसका परिणाम किसी के भी हक में अच्छा नहीं होगा। मैं…।"

अभी रानी अगमा इतना ही कह पाई थी कि संयोगिता अधीर होकर बोल उठी—मैं पिताजी के लिए क्या कहूँ? वे भविष्य के लिए नहीं सोचते। बदले की आग में जले जा रहे हैं। इसमें भी एक राज है, बड़ी रानी।"

"क्या?"

"मेरे पिता का प्रधान सेनापति सूर्यसिंह है। वह बहुत ही दुष्ट स्वभाव का है। वही उनके कान भरता है। वही उनके भविष्य के पथ पर . . . बिछा रहा है।"

"सूर्यसिंह को मैं अच्छी तरह जानती हूँ, संयोगिता।"

"कैसे, बड़ी रानी?"

"वह जालधंर के राजा का बेटा है। उसका बाप केन्द्र को कभी कर नहीं देता था। उसकी भावनाएँ विद्रोही थी। वह भारत सम्राट् की निन्दा करता और उनके विरुद्ध कुचक्र रचता था। इसीलिए उस राज्य पर चढ़ाई की गई और उसका पतन हो गया।"

"हाँ, महारानी। सूर्यसिंह सम्राट् को अपना शत्रु समझता है।"

"युद्ध में उसके पिता ने वीरगति पाई। उसका वध सम्राट् ने स्वयं अपने हाथों से किया था। वे चाहते थे कि सूर्यसिंह को युवराज पद दें। वह उन्हें हमेशा कर दिया करें। मगर अफसोस है कि···।"

"हाँ, कहो न, बड़ी रानी! तुम कहते-कहते रुक क्यों गई?"

"लेकिन सूर्यसिंह ने चौहान को धोखा दिया। उनके साथ विश्वास-घात किया। वह कन्नौज चला गया। उसने तुम्हारे पिता के दरबार में जाकर शरण ली। तभी उसका राज्य केन्द्र राज्य में सम्मिलित कर दिया गया।"

"महारानी, तुम्हें सूर्यसिंह की काली करतूतों का पता नहीं है। वह आस्तीन का साँप है। घर का भेदी है। वह कन्नौज राज्य का भी हित नहीं चाहता। उसके मन में मैल है!"

"ऐं! ?"

"हाँ, महारानी। वह मुझपर आसक्त था। मुझपर डोरे डाल रहा था। मेरे पिता को धोखा देकर मुझसे ब्याह रचाना चाहता था। वह मेरी रोज झूठी शिकायतें पिताजी से करता। उसी ने उन्हें बतलाया था कि मेरे पास सम्राट् चौहान का चित्र है।"

"तब तो संयोगिता, सूर्यसिंह बहुत ही खतरनाक है।"

"क्या कहूँ, बड़ी रानी। यदि उसे सेनापति के पद से हटाया नहीं गया, तो वह कन्नौज नरेश बनने के लिए षड्यन्त्र रचेगा।"

"यह तुम्हारे पिता जाने और उनका काम। मैं तो एक बात जानती हूँ कि आदमी को सबकी बातें सुननी चाहिए, मगर करना वही उचित होता है। जो उसकी अपनी समझ में आये।"

"मेरे चाचा रायमल ने पिताजी को मना किया था कि सम्राट् चौहान से शत्रुता मोल मत लो। मगर सूर्यसिंह ने भड़काया। इसीलिए मेरे प्राणेश्वर की सोने की प्रतिमा बनवाई गई और उन्हें द्वारपाल का पद दिया गया।"

"तुम्हारे पिता ने जैसा किया, वैसा फल पाया। तभी तो कहा जाता है कि जैसे को तैसा। वे मेरे मौसेरे जेठ हैं। सम्राट् उनके मौसेरे भाई हैं। उन्हें सन्तोष करना चाहिए। मगर वे प्रतिशोध की आग में जल रहे हैं। यह बहुत बुरा है।"

"महारानी, अब यह घर मेरा है। सम्राट् मेरे सौभाग्य के प्रतीक हैं। इसीलिए तुमसे कुछ भी नहीं छिपाऊँगी। सूर्यसिंह पिताजी से कहता था कि···?"

"क्या कहा था ?"

"जब तराइन के मैदान में मुहम्मद गौरी बुरी तरह पराजित हुआ और सम्राट् ने उसे क्षमा करके छोड़ दिया, तब सूर्यसिंह कहता था कि मैं गजनी जाऊँगा और हारे हुए मुहम्मद गौरी को युद्ध के लिए फिर तैयार करूँगा। उसे आश्वासन दूँगा कि भारत आने पर कन्नौज से उसे सैनिक सहयोग मिलेगा।"

"इतने नीच विचार!"

"हाँ, रानी। चाचा रायमल ने इसका भी खूब खुलकर विरोध किया। बात दब गई। अब आगे देखो, क्या होता है ?"

"यहाँ पर सम्राट् की भी भूल है, संयोगिता।"

"कैसे ?"

"दुश्मन को कभी कमजोर नहीं समझना चाहिए। और उसपर दया करने का परिणाम अच्छा नहीं होता। साँप को यदि मारो नहीं, तो उसके दाँत तोड़ दो। बन्दी मुहम्मद गौरी को छोड़कर सम्राट् ने अपने जीवन में यह सबसे बड़ी भूल की है ?"

"सुना है कि इसके लिए चन्द्र कवि ने सम्राट् को बहुत मना किया था ?"

"हाँ, यह सच है, संयोगिता। सेनापति चामुण्डराय ने भी समझाया

था। मैंने भी कहा था, मगर मेरे पतिदेव का कहना था कि दण्ड से बड़ी क्षमा है। उन्होंने इस तरह अपने क्षत्रिय धर्म का पालन किया है और उस की शोभा बढ़ाई है।"

"यह बहुत संभव है, महारानी कि यवन फिर हमला करे उसका कोई भरोसा नहीं।"

"संयोगिता, कोई नही जानता कि भविष्य की गोद में काँटे होंगे अथवा फूल। छोड़ो यह राजनीति का प्रसंग है। तुम्हारे आ जाने से मैं निश्चित हो गई। अब मैं सम्राट् चौहान को तुम्हारे हाथों में छोड़ती हूँ। यह दीपक निरन्तर जलता रहे, संयोगिता, संसार के मालिक से मेरी यही प्रार्थना है।"

यह कहते-कहते रानी अगमा की आँखों में आँसू आ गये। वे संयोगिता के प्रति अटूट स्नेह से भर गई। इसीलिए उसे गले से लगा लिया और उसकी बलायें लेने लगी।

हुआ है। हमारा सहयोग पाकर प्रसन्न ही नहीं, हमले के लिए राजी हो जायेगा। हम उसे सहयोग देंगे और अपनी आँखों से पृथ्वीराज का सर्वनाश देखेंगे।"

"जो भी करना है, जल्दी करो, सूर्यसिंह। मेरा कलेजा तभी ठण्डा होगा, जब पृथ्वीराज की मौत यवन के हाथों होगी। चाहता तो यह हूँ कि वह बन्दी बनाकर मेरे सामने लाया जाये और मैं अपनी तलवार से उसका सिर, धड़ से अलग कर दूँ। मैं···"

अभी जयचन्द की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि रायमल को बोलना पड़ा। वे कन्नौज नरेश को धिक्कारते हुये क्रोध-भरे स्वर में बोले—"तुम कितने नीच हो, जयचन्द! आपसी फूट के चक्कर में एक विदेशी यवन का सहयोग ले रहे हो। तुम देश को परतन्त्रता की बेडियों से जकड देना चाहते हो। तुम देशद्रोही हो। समाई करो, जयचन्द। तुम्हारी बेटी भारत की साम्राज्ञी बन गई।"

"समाई कैसे कर लूँ, चाचाजी?"

"मेरा कहना यही है कि सूर्यसिंह को गजनी मत भेजो। तुम नहीं रहोगे, गोरी भी एक दिन समाप्त हो जायेगा, लेकिन इतिहास के काले पन्नों में तुम्हारा नाम हमेशा अमर रहेगा।"

"मैं इतिहास के काले पन्नों से बिल्कुल नहीं डरता हूँ, चाचाजी। मरने के बाद कौन देखने आता है कि उसके लिए क्या हो रहा है?"

"कितने शर्म की बात है! जहाँ पृथ्वीराज का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा, वहीं तुम्हें देशद्रोही, देश का कलंक कहकर पुकारा जायेगा। इस कलंक से बचो, जयचन्द, मेरा कहना मानो।"

"चाचाजी, दुनिया की कोई भी शक्ति मुझे इसके लिए मना नहीं कर सकती। मैं पृथ्वीराज से बदला अवश्य लूँगा।"

"रायमल ने जयचन्द को बहुत समझाया, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। वे निराश होकर अपने आसन पर बैठ गये और दरबार की कार्यवाही चलती रही।

कन्नौज नगर का कोतवाल जोधमल रायमल की बातें सुन रहा था। उससे चुप नहीं रहा गया। वह उठकर खड़ा हो गया। उसने धीरे से

मन्त्रणा

राजा जयचन्द ने कई दिन तक दरबार नहीं लगाया। उसके चेहरे पर उदासी के बादल छाये रहे।

प्रतिहिंसा की आग उनके कलेजे को खाक कर रही थी। प्रतिशोध की भावना उन्हें व्याकुल बना रही थी। वे अब रुककर साँसें लेते और छोटी से छोटी बात पर भी उन्हें क्रोध आ जाता।

कई दिन बाद दरबार लगा। राजा जयचन्द ने सभी सभासदों से कुण्ठित होकर कहा—"यह मेरी कितनी बड़ी तौहीन है कि मेरा दुश्मन आया और मेरे सामने ही मेरे घर में मेरी इज्जत पर डाका डालकर चला गया। तुम लोग कुछ भी नहीं कर पाये। सेनापति सूर्यसिंह, तुम्हें धिक्कार है।" "मैं बहुत लज्जित हूँ, स्वामी। मुझे क्षमा कर दीजिए, राजन्। मैं तिनका था, तिनका। इसीलिए तूफान से टक्कर नहीं ली। धीरज रखिये। वह दिन भी आयेगा, जब सम्राट् चौहान का अन्त हो जायगा, विनाश हो जायेगा।" "सूर्यसिंह, कैसी बातें करते हो? शत्रु रंग में भंग कर गया। उसने स्वयंवर की रंगभूमि को रणभूमि बना दिया। तुम सब देखते रहे, तुम्हारा कोई कौशल नहीं चला और दुश्मन बाजी मार ले गया।"

"महाराज! हम सब लोग पृथ्वीराज के सैनिकों से बुरी तरह घिर गये थे फिर शिकारी शिकार लेकर भाग चुका था। उसका पीछा करने से कोई फायदा नहीं था। उसके साथ पच्चीस हजार फौज थी।"

सूर्यसिंह कह रहा था। एक अकेले जयचन्द ही नहीं, सारे दरबारी उसकी बातें सुन रहे थे।

सूर्यसिंह ने आगे फिर कहा—"अब तो एक ही रास्ता है, राजन।"

"क्या?"

"मुहम्मद गोरी को भारत आने का निमन्त्रण दिया जाए। वह हारा

हुआ है। हमारा सहयोग पाकर प्रसन्न ही नहीं, हमले के लिए राजी हो जायेगा। हम उसे सहयोग देंगे और अपनी आँखों से पृथ्वीराज का सर्वनाश देखेंगे।"

"जो भी करना है, जल्दी करो, सूर्यसिंह। मेरा कलेजा तभी ठण्डा होगा, जब पृथ्वीराज की मौत यवन के हाथों होगी। चाहता तो यह हूँ कि वह बन्दी बनाकर मेरे सामने लाया जाये और मैं अपनी तलवार से उसका सिर, धड़ से अलग कर दूँ। मैं···"

अभी जयचन्द की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि रायमल को बोलना पड़ा। वे कन्नौज नरेश को धिक्कारते हुये क्रोध-भरे स्वर में बोले—"तुम कितने नीच हो, जयचन्द! आपसी फूट के चक्कर में एक विदेशी यवन का सहयोग ले रहे हो। तुम देश को परतन्त्रता की बेड़ियों से जकड़ देना चाहते हो। तुम देशद्रोही हो। सफाई करो, जयचन्द। तुम्हारी बेटी भारत की साम्राज्ञी बन गई।"

"सफाई कैसे कर लूँ, चाचाजी?"

"मेरा कहना यही है कि सूर्यसिंह को गजनी मत भेजो। तुम नहीं रहोगे, गौरी भी एक दिन समाप्त हो जायेगा, लेकिन इतिहास के काले पन्नों में तुम्हारा नाम हमेशा अमर रहेगा।"

"मैं इतिहास के काले पन्नों से बिल्कुल नहीं डरता हूँ, चाचाजी। मरने के बाद कौन देखने आता है कि उसके लिए क्या हो रहा है?"

"कितने शर्म की बात है! जहाँ पृथ्वीराज का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा, वहीं तुम्हें देशद्रोही, देश का कलंक कहकर पुकारा जायेगा। इस कलंक से बचो, जयचन्द, मेरा कहना मानो।"

"चाचाजी, दुनिया की कोई भी शक्ति मुझे इसके लिए मना नहीं कर सकती। मैं पृथ्वीराज से बदला अवश्य लूँगा।"

"रायमल ने जयचन्द को बहुत समझाया, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। वे निराश होकर अपने आसन पर बैठ गये और दरबार की कार्यवाही चलती रही।

कन्नौज नगर का कोतवाल जोधमल रायमल की बातें सुन रहा था। उससे चुप नहीं रहा गया। वह उठकर खड़ा हो गया। उसने धीरे से

जयचन्द से कहा—"रायमलजी ठीक कहते हैं, राजन् । हम आपस मे लड़ें, एक-दूसरे को जान से मार डाले, लेकिन यह कभी नही होना चाहिए कि एक विदेशी यवन को अपने देश मे आने का निमन्त्रण दें। यह आपकी भूल है । इसके लिए आप बाद मे जीवन-भर पछतायेंगे ।"

"नालायक ! नमकहराम ! मेरा नमक खाता है और मुझे ही तमीज सिखलाता है । तू चुप रह । तुझे बीच में बोलने का कोई अधिकार नही है ।"

"मैं चुप नही रहूँगा । मेरी जबान खुल गई है । मैं आपका विरोध करूँगा कि आप विदेशी यवन को भारत मे न बुलायें ।"

सूर्यसिंह को मौका मिल गया । वह जोधमल से न जाने कब से जलता था । इसीलिए उठकर खडा हो गया और तत्क्षण ही ध्वस्त स्वर से कहने लगा—"महाराज, यह घर का भेदी है । मुझे इसपर सन्देह है । गुप्त सूत्रो से पता लग गया कि संयोगिता का पत्र लेकर यही देहली गया था । इसी की प्रेरणा से पृथ्वीराज यहाँ आये और रंग में भंग करके चले गये ।"

"एँ ! यह बात है ?"

"हाँ, महाराज ।"

'जोधमल, तुमपर जो आरोप लगाया गया है, उसका उत्तर तुम्हारे पास क्या है ?"

जोधमल निर्भीक था । उसने सत्य पर आवरण नही डाला । उसे स्पष्ट कर दिया । वह बोला—"संयोगिता मेरी दूध-बहन है । मैं उसका बड़ा भाई हूँ । एक बड़े भाई का छोटी बहन के प्रति जो कर्तव्य होता है, मैंने उस कर्तव्य का पालन किया । मैं दोषी नही हूँ । मैं···।"

"जोधमल !"

जयचन्द जोर से चिल्लाये । वे क्रोध से काँपने लगे थे । उनकी आँखें लाल हो गई । वे तेज गले में बोले—

"इसी वक्त···इसी समय दरबार से चले जाओ, जोधमल, और फिर कभी जिन्दगी मे अपनी सूरत मुझे मत दिखलाना ।"

"आप कहते हैं, तो मैं चला जाऊँगा : मैं भी ऐसी जगह रहना नहीं

चाहता, जहाँ अन्याय और अनीति चल रही हो।"

यह कहने के साथ जोधमल ने जयचन्द को अभिवादन किया। वह वहाँ से जाने लगा। तभी सूर्यसिंह ने व्यस्त स्वर मे जयचन्द से कहा—

"महाराज, जोधमल को ऐसे मत जाने दीजिए। यह हमारा शत्रु है। यह जाकर दुश्मन से मिल जायेगा और हमारे भेद दे देगा। इसे कैद कर लो। इसे कारागार में डाल दो। यह कभी मुक्त नही किया जायेगा।"

इसपर जयचन्द तो बोलते-बोलते ही रह गये। रायमल को क्रोध आ गया। वे सूर्यसिंह को बुरा-भला कहने लगे। वे बोले—"सूर्यसिंह, तुम्हें जोधमल के लिए कुछ भी कहने का अधिकार नही है। तुम सेनापति हो, जयचन्द के महामंत्री नही।"

सूर्यसिंह मौन हो गया। उसने रायमल को कुछ भी जवाब इसलिए नही दिया कि वे उसपर बरस पड़ेंगे।

जयचन्द रायमल का मुँह देखने लगे। जोधमल जा रहा था। उसकी पीठ दिखलाई पड रही थी।

जब जोधमल चला गया, तो रायमल ने एक लम्बी साँस ली। वे दुखी होकर कहने लगे—"यह बहुत बुरा हुआ। इसका परिणाम कन्नौज के हक मे अच्छा नही होगा।"

जयचन्द ने अपने चाचा की ओर देखा। वे भी चुप नही रहे। उनके मुँह से निकल गया— "होनहार बलवान होता है, चाचा जी। उसे किसी तरह रोका नही जा सकता। जोधमल आस्तीन का साँप था। इसीलिए उसे अपने राज्य से निकाल दिया।"

सभी दरबारी जोधमल के जाने से दुःखी थे। कोई भी ऐसा नहीं था, जिसे जोधमल प्यारा नही था। सभी का अन्तःकरण यह रहा था कि राजा जयचन्द ने अपने जीवन में यह सबसे बड़ी भूल की है।

देशद्रोहिता

जोधमल कन्नौज से चला गया। इसका सभी को महान दुःख था। रानी तिलका जयचन्द पर बहुत नाराज हुईं। वे कई दिन तक रोती रहीं।

रायमल भी इस घटना से अप्रतिभ हो गये थे। उन्हें लग रहा था कि अगर जयचन्द सूर्यसिंह के कहने पर चलते रहे, तो एक दिन कन्नौज राज्य के सौभाग्य का सूरज हमेशा-हमेशा के लिये अस्त हो जायेगा।

कुछ दिन बाद रायमल को यह पता भी हो गया कि राजा जयचन्द ने अपने प्रधान सेनापति सूर्यसिंह को गजनी भेजा है। यह गोरी के पास इसलिये गया है कि यवन भारत पर पुनः आक्रमण करे। उसे कन्नौज राज्य से पूरा-पूरा सैनिक सहयोग दिया जायेगा।

इसपर रायमल को बहुत क्रोध आया। उन्होंने अपने भतीजे जयचन्द को खूब बुरा-भला कहा।

रायमल की समझ में अच्छी तरह आ गया था कि अब कन्नौज में उनका रहना उचित नहीं है। इसीलिये एक दिन वे चुपचाप वहाँ से चल दिये।

कोई भी नहीं जान पाया, किसी को भी पता नहीं चला कि वे कहाँ गये और उनका क्या हुआ।

जयचन्द ने रायमल की खोज में सैनिक भेजे। ऐसे ही उनके गुप्तचर यह पता लगा रहे थे कि आखिर जोधमल कहाँ गया।

इधर यह परिस्थिति थी और उधर सूर्यसिंह गजनी पहुँच गया था। उसका वहाँ पर स्वागत हुआ।

मुहम्मद गोरी ने हँसकर कहा—"कन्नौज के सिपहसालार, तुम्हारे आने से मैं बहुत खुश हूँ। मेरे पास दो लाख फौज तैयार है और मैं जल्दी ही हिन्दुस्तान पर चढ़ाई करूँगा।"

"आप पृथ्वीराज पर हमला कीजिये। हम लोग आपके

"बहुत खूब, बहुत खूब !"

"हमारे राजा जयचन्द का कहना है कि जब आपकी फौज देहली के करीब पहुँच जायेगी, तो कन्नौज से सेना भी आ जायेगी।"

"हम इसके लिये तुम्हारे शुक्रगुजार हैं।"

"हमारे राजा आपको सहयोग देने के बदले मे देहली का राज्य चाहते हैं।"

"उन्हे देहली का तख्त मिलेगा। यह मेरा वादा है।"

"और मैं भी···।"

"हाँ, कहो न सिपहसालार! तुम कहते-कहते रुक क्यों गये ?"

इसपर सूर्यसिंह ने मुहम्मद गोरी को अपनी कहानी आदि से लेकर अन्त तक सुना दी। फिर कहने लगा—"मैं अपने लिये चित्तौड़ का राज्य चाहता हूँ।"

"तुम्हारी भी यह ख्वाहिश पूरी होगी, सिपहसालार।"

"आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।"

"बोलो, और क्या चाहते हो, सिपहसालार?"

"बस और कुछ नही। अब मुझे आज्ञा दीजिए और आप हिन्दुस्तान के लिये फौज लेकर कूँच कर दीजिये।"

"यही होगा सिपहसालार। जाओ खुदा हाफिज।"

सूर्यसिंह ने झुककर गजनी सम्राट् मुहम्मद गोरी को कोनिश की और वहाँ से चल दिया।

उसके जाते ही मुहम्मद गोरी तथा कुतुबुद्दीन ऐबक मे बातें होने लगीं।

"यह निहायत, अच्छा हुआ सुलतान। अब पृथ्वीराज की खैर नहीं। उसके नाश के दिन करीब आ गये है।"

"जयचन्द ने अपनी फौज जंग के मैदान मे भेजने का वादा किया है। बदले मे वह देहली का तख्त चाहता है।"

"शहंशाह, जो अपनी कौम का दुश्मन है, वह भला फिर आपका कैसे हो सकता है ? आप पहले अपना काम बनाइये। जयचन्द के लिये बाद में सोच लिया जायेगा।"

"ठीक कहते हो, सिपहसालार। हमें आपस की फूट से फायदा उठाना चाहिये। समझदारी यही कहती है।"

"जहाँपनाह! ये हिन्दुस्तानी राजा कितने नासमझ हैं, जो आपस में ही लड़ते रहते हैं। कोई भी एक-दूसरे का भला नहीं चाहता। हमें जल्दी-से-जल्दी कूँच कर देना चाहिए।"

"बेशक!"

"एक बात और है, आलमपनाह।"

"क्या?"

"पृथ्वीराज को मात देने के बाद हमें हिन्दुस्तान में अपनी हुकूमत कायम करनी है।"

"यही पाक इरादा मेरा भी है सिपहसालार।"

"जयचन्द को भी सबक देना है कि अपनी कौम की खिलाफत करने का नतीजा क्या होता है।"

"सिपहसालार! ये सारी बातें बाद में सोची जायेंगी। पहले हिन्दुस्तान पहुँचो और देखो कि वहाँ क्या होता है।"

"आलीजाह! हमारी फौज बिल्कुल तैयार है। बस उसे हुक्म देने भर की देर है।"

"यह मैं जानता हूँ, लेकिन...।"

"लेकिन क्या, सरकार?"

"हमें किसी पर भी यकीन नहीं करना चाहिये।"

"क्यों?"

"जब हिन्दुस्तान की यह हिन्दू कौम अपनी जाति की ही साथी और हमदर्द नहीं है, तो फिर दूसरे के काम कैसे आ सकत [illegible]। इसलिये यह जरूरी है कि हमें खुद अपनी बाँहों पर भरोसा [illegible]। मान, लो जयचन्द ने इमदाद न दी, तो?"

"जयचन्द फौजी इमदाद जरूर देगा।"

"हाथ कंगन को आरसी क्या? वक्त आने [illegible]

"नहीं, आलमपनाह! जयचन्द को देहली [illegible] वह आपकी मदद जरूर [illegible]।"

"ठीक है। फिर भी हमें होशियार रहना चाहिये।"

"आलीजाह! इस बार फतह जरूर होगी। इसमें कोई शक नहीं।"

"मैं यकीन तब करता हूँ, जब मौका मेरा साथ देता है।"

वजीर दोनों की बातें बड़ी देर से सुन रहा था। उसने भी बीच में दखल दिया और अपनी बात करने लगा—"हुजूर का इकबाल बुलन्द रहे। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि हिन्दुस्तान की जंग में कामयाबी आपकी कदमबोसी करेगी।"

"वल्लाह! वजीरेआजम, क्या बात कही है! तुम्हारे मुंह में घी-शक्कर।"

"जहाँपनाह! हिन्दुस्तान पर आपकी हुकूमत हो जाये। फिर मैं भी उस सोने की चिड़िया को देखूँगा। सुना है कि उस मुल्क में सोना ही सोना है।"

"यह सच है। हिन्दुस्तान में बेशुमार दौलत है।"

अन्य दरबारी भी अपनी-अपनी कहने लगे। मुहम्मद गौरी खुशी से फूला नहीं समा रहा था।

ऐसे ही कुतुबुद्दीन ऐबक के हर्ष का पारावार न था। वह भी भविष्य के स्वर्णिम सपने देख रहा था।

गजनी में घर-घर में यह चर्चा जोर पकड़ रही थी कि जल्दी ही हिन्दुस्तान पर उसके सुलतान मुहम्मद गौरी का हमला होने वाला है। इस बार क्यामत की जंग होगी और कामयाबी गौरी को मिलेगी। वह हिन्दुस्तान का भी बादशाह बनेगा।

आश्चर्य पर आश्चर्य

सम्राट् पृथ्वीराज चौहान का दरबार लग रहा था। एक दूत ने आकर समाचार दिया कि कन्नौज से जोधमल आये हैं।

"ऐं !"

कहकर सम्राट् कुछ चौंके। फिर सन्देशवाहक दूत से कहने लगे—"जाओ। जोधमल को सम्मान के साथ ले आओ।"

"जो आज्ञा, महाराज !"

कुछ ही क्षण बाद जोधमल सम्राट् के सामने आ गया। उसने श्रद्धा-विभोर होकर सम्राट् को अभिवादन किया।

"कहो, जोधमल, कुशल तो है ?"

सम्राट् के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए जोधमल निराशा-भरे स्वर में कहने लगा—"कुछ न पूछिये, सम्राट्। हमारे देश भारतवर्ष के अब बुरे दिन आ गये हैं।"

यह कहकर जोधमल ने कन्नौज का सारा हाल बतलाया। सुनकर सम्राट् पृथ्वीराज चौहान सन्नाटे में आ गये। उनके मुँह से कुछ देर बाद निकला—"आपस की फूट देश का अनिष्ट करेगी। इसमें कोई सन्देह नहीं। जोधमल तुम सिर-आँखों पर हो। मेरे महल में रहो, और कन्नौज को हमेशा-हमेशा के लिये भूल जाओ।"

सेनापति चामुण्डराय तथा चन्द्र कवि भी कन्नौज का हाल सुनकर विचलित हो उठे। सभी लोग चिन्ता करने लगे कि जयचन्द ने यह गलत कदम उठाया है। इसका दुष्परिणाम सभी को भोगना पड़ेगा।

जोधमल रंगमहल में गया। वह संयोगिता से मिला। संयोगिता ने अपने पिता की काली करतूत की कहानी सुनी, तो उसे क्रोध आ गया। वह आवेश में भरकर बोली—"पिताजी को मैं मना करूँगी कि यवन मुहम्मद गोरी को सैनिक सहायता न दें।"

"यह सब व्यर्थ है, बहन ।"

"मैं कन्नौज जाऊँगी और···।"

"नहीं, बहन, नहीं । तुम्हारा कन्नौज जाना उचित नहीं है । हमें यवन से टक्कर लेने के लिए तैयार रहना चाहिये ।"

"मैं ऐसे बाप की हत्या कर दूँगी, जो देशद्रोही हो ।"

"शान्त हो, राजकुमारी ! यह समय क्रोध करने का नहीं है । देश पर विपत्ति के बादल छा रहे हैं । हम सबका कर्तव्य हो जाता है कि शत्रु से अपनी जन्मभूमि की रक्षा करें ।"

इस तरह जोधमल ने संयोगिता को बहुत समझाया । मगर वह आपे से बाहर हो रही थी ।

रानी अगमा तथा सम्राट् ने भी संयोगिता को समझाया । किन्तु वह उबलती ही रही । उसका क्रोध किसी तरह शान्त नहीं हुआ ।

× × ×

दूसरे दिन सम्राट् का दरबार लगा । उसमें यह चिन्ता व्यक्त की जा रही थी कि मुहम्मद गौरी को भारत आने के लिये जयचन्द ने निमन्त्रण भेजा है । उसे सैनिक सहयोग देने का भी वचन दिया है । इसीलिये गौरी पुनः आयेगा । वह देश पर फिर चढ़ाई करेगा ।

चन्द्र कवि ने अपना मत प्रगट करते हुए कहा—"गौरी को इस बार ऐसी चोट दी जायेगी कि वह जिन्दगी-भर याद करेगा । देश के सभी राजाओं को पत्र भेज दो, सम्राट् कि वे अपनी सेना को लेकर गौरी के मुकाबले के लिये राजधानी आ जायें ।"

"हाँ, महामन्त्रीजी, चन्द्र कवि ठीक कहते हैं । सभी नरेशों को पत्र लिख दो ।"

"जो आज्ञा, महाराज ।"

चामुण्डराय का कहना था कि गौरी के हिन्दुस्तान आने से पहले ही जयचन्द को कुचल दिया जाये । यदि सम्राट् आज्ञा दें, तो मैं फौज लेकर कन्नौज के लिये रवाना हो जाऊँ । उस नीच देशद्रोही राजा के लिये मैं ही काफी हूँ ।

किन्तु समरसिंह ने इसके लिये चामुण्डराय को मना कर दिया ।

आश्चर्य पर आश्चर्य

सम्राट् पृथ्वीराज चौहान का दरबार लग रहा था। एक दूत ने आकर समाचार दिया कि कन्नौज से जोधमल आये हैं।

"ऐं!"

कहकर सम्राट् कुछ चौंके। फिर सन्देशवाहक दूत से कहने लगे—"जाओ। जोधमल को सम्मान के साथ ले आओ।"

"जो आज्ञा, महाराज!"

कुछ ही क्षण बाद जोधमल सम्राट् के सामने आ गया। उसने श्रद्धा-विभोर होकर सम्राट् को अभिवादन किया।

"कहो, जोधमल, कुशल तो है?"

सम्राट् के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए जोधमल निराशा-भरे स्वर में कहने लगा—"कुछ न पूछिये, सम्राट्। हमारे देश भारतवर्ष के अब बुरे दिन आ गये हैं।"

यह कहकर जोधमल ने कन्नौज का सारा हाल बतलाया। सुनकर सम्राट् पृथ्वीराज चौहान सन्नाटे में आ गये। उनके मुँह से ... दे... निकला—"आपस की फूट देश का अनिष्ट करेगी। इस ... जोधमल तुम सिर-आँखों पर हो। मेरे महल में ... हमेशा-हमेशा के लिये भूल जाओ।"

विभीषण था, पृथ्वी, वैसे ही भारत में जयचन्द ने जन्म लिया है। अगर विभीषण लंका का भेदी न होता, तो रावण की इतनी बुरी हार कभी न होती।"

"चाचाजी, अफसोस मत कीजिए। आने वाला समय अपने-आप ही बतला देगा कि देशद्रोहिता का परिणाम क्या होता है। पहले मैं गौरी से निपट लूं। उसके बाद जयचन्द का भी सिर कुचल दूंगा।"

पृथ्वीराज ने समरसिंह से कहा—"चाचाजी को विश्रामगृह में ले जाओ। इन्हें कोई कष्ट न हो, इसका ध्यान रखना।"

संयोगिता को जब मालूम हुआ कि कन्नौज से रायमल भी आये हैं, तो वह दासियों के साथ अतिथि-गृह में पहुँची।

रायमल ने संयोगिता को देखते ही वक्ष से लगा लिया। उनकी आँखों में ममता के आँसू आ गये। वे स्नेह-भरे स्वर में बोले—"कैसी हो, बेटी संयोगिता?"

"दादाजी, आपके आशीर्वाद से मुझे कोई कष्ट नहीं है। मैं बहुत सुखी हूँ।"

"बस, सुखी रहो, बेटी, और तुम्हारे सौभाग्य का सूरज कभी-अस्त न हो। मुझ बूढ़े का यही आशीर्वाद है।"

संयोगिता और रायमल मे देर तक जयचन्द के विषय में ही बातें होती रहीं। दोनों एक-दूसरे को पाकर बहुत प्रसन्न थे, किन्तु भविष्य की चिन्ता दोनों को थी।

संयोगिता का कहना था कि यदि आवश्यकता पड़ी, तो पति के साथ वह भी युद्ध के मैदान में जायेगी। सम्राट् गौरी का वध करेंगे और वह अपने हाथों अपने पिता का सिर काट लेगी।

इस तरह राजधानी देहली में घर-घर मे यह समाचार फैल गया कि गजनी का सुलतान मुहम्मद गौरी भारत पर फिर हमला करने आ रहा है। इस बार वह पूरी तैयारी के साथ आयेगा। इसके साथ बहुत बड़ी फौज होगी।

उनका कथन था कि इस तरह हमारी सेना कम हो जायेगी। इस समय आवश्यकता इस बात की है कि अपनी सेना का खूब अच्छी तरह संगठन किया जाये। इसके अतिरिक्त उसमे नये सैनिकों की भर्ती की जाये।

यह राय सम्राट् को भी पसन्द आई। उन्होने चामुण्डराय को आदेश दिया। वे बोले—"सेना में नई भर्ती कल से प्रारम्भ कर दो।"

"जो आज्ञा, सम्राट्।"

अब सम्राट् पृथ्वीराज सजग हो गये थे। उन्हे जयचन्द पर बहुत क्रोध था। मगर उन्होने उलझना ठीक नही समझा। इसीलिए कन्नौज पर चढ़ाई नही की।

महामन्त्री ने देश के सभी राजाओं को इस आशय के पत्र लिख दिये थे कि मुहम्मद गौरी का हमला भारत पर फिर होने वाला है। वे सब अपनी-अपनी सेनायें लेकर राजधानी आ जायें।

चामुण्डराय ने सेना मे भर्ती शुरू कर दी थी। युवक बड़े उत्साह से आते और चौहान की सेना मे भर्ती होते। सभी का यह कहना था कि हम देश को परतन्त्र नही होने देंगे। यवन गौरी के दाँत खट्टे कर दिये जायेंगे, अगर वह फिर भारत आया।

अभी जोधमल्ल को आये थोड़े ही दिन हुए थे कि दरबार मे सम्राट् को सूचना मिली कि कन्नौज से रायमल आये हैं।

सम्राट् ने रायमल को दरबार मे बुलाया। उन्हें बैठने के लिये ऊँचा सिंहासन दिया गया। फिर पृथ्वीराज ने पूछा—"कहो, कैसे आये चाचाजी? आपके दर्शन पाकर मैं धन्य हो गया। मेरे योग्य जो सेवा हो, बतलाइये?"

रायमल बच्चों की तरह रोने लगे और रोते-रोते पृथ्वीराज से बोले—"बेटा पृथ्वी, जयचन्द के सिर पर विनाश का भूत सवार है। मैंने इसीलिए कन्नौज छोड़ दिया है और यहाँ चला आया हूँ।"

सभी दरबारी सन्नाटे मे आ गये। सबकी निगाहें रायमल पर टिकी थी।

और रायमल रो-रोकर कन्नौज का सारा हाल सम्राट् को सुना ये। उनके मुँह से पीड़ा-भरा करुण स्वर निकला—"जैसे लंका का

विभीषण था, पृथ्वी, वैसे ही भारत में जयचन्द ने जन्म लिया है। अगर विभीषण लंका का भेदी न होता, तो रावण की इतनी बुरी हार कभी न होती।"

"चाचाजी, अफसोस मत कीजिए। आने वाला समय अपने-आप ही बतला देगा कि देशद्रोहिता का परिणाम क्या होता है। पहले मैं गौरी से निपट लूं। उसके बाद जयचन्द का भी सिर कुचल दूंगा।"

पृथ्वीराज ने समरसिंह से कहा—"चाचाजी को विश्रामगृह में ले जाओ। इन्हें कोई कष्ट न हो, इसका ध्यान रखना।"

संयोगिता को जब मालूम हुआ कि कन्नौज से रायमल भी आये हैं, तो वह दासियों के साथ अतिथि-गृह मे पहुँची।

रायमल ने संयोगिता को देखते ही वक्ष से लगा लिया। उनकी आँखों में ममता के आँसू आ गये। वे स्नेह-भरे स्वर मे बोले—"कैसी हो, बेटी संयोगिता?"

"दादाजी, आपके आशीर्वाद से मुझे कोई कष्ट नही है। मैं बहुत सुखी हूँ।"

"बस, सुखी रहो, बेटी, और तुम्हारे सौभाग्य का सूरज कभी-अस्त न हो। मुझ बूढे का यही आशीर्वाद है।"

संयोगिता और रायमल मे देर तक जयचन्द के विषय में ही बातें होती रहीं। दोनों एक-दूसरे को पाकर बहुत प्रसन्न थे, किन्तु भविष्य की चिन्ता दोनों को थी।

संयोगिता का कहना था कि यदि आवश्यकता पड़ी, तो पति के साथ वह भी युद्ध के मैदान मे जायेगी। सम्राट् गौरी का वध करेंगे और वह अपने हाथों अपने पिता का सिर काट लेगी।

इस तरह राजधानी देहली में घर-घर मे यह समाचार फैल गया कि गजनी का सुलतान मुहम्मद गौरी भारत पर फिर हमला करने आ रहा है। इस बार वह पूरी तैयारी के साथ आयेगा। इसके साथ बहुत बड़ी फौज होगी।

गौरी का आगमन

राजा जयचन्द को इस बात का पता लग गया था कि जोधमल देहली गया है और पृथ्वीराज के महलों में रह रहा है।

कुछ ही दिन बाद जयचन्द को यह खबर मिली कि उसके चाचा रायमल भी देहली पहुँच गये हैं। जब गौरी का आक्रमण होगा, तो चौहान के साथ वे भी रणभूमि में जायेंगे। इससे जयचन्द की चिन्ता बढ़ी।

इसके बाद समय कुछ बीता। जयचन्द के कानों में ऐसी खबरें भी आने लगी कि देश के सभी राजा पृथ्वीराज को सहयोग देने जा रहे हैं।

जयचन्द को अपने सेनापति सूर्यसिंह पर पूरा भरोसा था। वे सूर्यसिंह से बोले—"तुमने गुप्तचरों की बातें सुनी, सूर्यसिंह, वे देहली से क्या समाचार लाये हैं?"

"सब कुछ सुना है, महाराज। आप निश्चिन्त रहिये। जैसे ही मुहम्मद गौरी की सेना पंजाब की सरहद पर आ जायेगी, हमारी फौज कन्नौज से रवाना हो जायेगी। जीत गौरी की होगी। आप भारत सम्राट् बनेंगे। आपको देहली का सिंहासन मिलेगा। पृथ्वीराज का विनाश हो जायेगा। अब वह दिन बहुत ही निकट आ गया है।"

"सूर्यसिंह, परिस्थिति बहुत ही बिगड़ गई है। भविष्य में क्या होगा, कुछ समझ में नहीं आता।"

"कुछ भी हो, महाराज। हमें मुहम्मद गौरी को विजयी बनाना है। वह लुटेरा है, लूट का माल लेकर गजनी वापस लौट जायेगा।"

"यह कुछ भी नहीं कहा जा सकता है, सूर्यसिंह।"

दोनों में देर तक इसी विषय पर बातें होती रहीं। जयचन्द की घबराहट बढ़ती जा रही थी। वे सोच रहे थे कि अगर कहीं मुहम्मद गौरी की हार हो गई, तो पृथ्वीराज कन्नौज पर चढ़ आयेगा। वह

यहाँ की ईंट से ईंट बजा देगा। उसके पास सात लाख फौज है।

कन्नौज की यह परिस्थिति थी और देहली में सम्राट् पृथ्वीराज चौहान संयोगिता के महल में बैठे थे। दोनों चौपड़ खेल रहे थे। उनमें हँस-हँसकर बातें हो रही थी।

द्वारपाल दासी ने आकर सूचना दी कि महाराज से मिलने चन्द्र कवि आये हैं।

सम्राट् ने चन्द्र कवि की उपेक्षा कर दी। वे दासी से बोले—"जाओ, राजकवि से कह दो कि मुझे अभी अवकाश नही है।"

उत्तर पाकर चन्द्रकवि चला गया। उसका अन्तःकरण कहने लगा कि सम्राट् राग-रंग में खो रहे हैं। उनके पास इतना भी समय नही कि वे मुझसे मिलें।

लगभग एक सप्ताह हो गया और सम्राट् ने अपना दरबार नही लगाया। जब देखो, तब वे संयोगिता के महल मे ही बने रहते।

एक दिन चन्द्र कवि साहस करके फिर गया। वह यह कहने आया था कि सम्राट् दरबार क्यों नही लगाते, राजकाज क्यों नही देखते ?

किन्तु उस दिन भी चन्द्र कवि को यह उत्तर मिला कि सम्राट् छोटी रानी संयोगिता के साथ बैठे चित्र बना रहे है। उन्हें समय कहाँ है। वे राजकवि से फिर मिलेंगे।

चन्द्रकवि निराशा से भर गया। वह महामन्त्री और चामुण्डराय से कहने लगा कि अगर सम्राट् का यही ढंग रहा, तो वह राजकाज एकदम भूल जायेंगे।

सम्राट् संयोगिता के साथ बैठे चित्र बना रहे थे। उनकी तूलिका चल रही थी। संयोगिता ने उनके हाथ से तूलिका ले ली। वह कहने लगी, "अब इस अधूरे चित्र को मैं पूरा करूँगी, आर्यपुत्र।"

सम्राट् ने हँसकर तूलिका संयोगिता को दे दी। तभी द्वारपाल दासी ने आकर बतलाया कि पंजाब की सरहद से एक दूत आया है और इसी समय सम्राट् से मिलना चाहता है।

सम्राट् की आज्ञा पर दूत को बुलाया गया। वह बहुत ही घबराया हुआ था हाँफते स्वर में कहने लगा—"महाराज, गजब हो गया। मुहम्मद

युद्ध की तैयारी करने लगे।

राजधानी में हलचल मच गई। जिसे देखो, वही कह रहा था कि मुहम्मद गोरी ने देश पर आक्रमण कर दिया है। इस वार उस यवन को कन्नौज के राजा जयचन्द ने बुलाया है।

गौरी ने भारत पर चढाई फिर कर दी। उसकी विशाल सेना पंजाब की सरहद तक आ गयी है।"

सम्राट के हाथों के तोते उड़ गये। संयोगिता के हाथ से तूलिका गिर पड़ी। दम्पति भौंचक्के-से होकर दूत का मुँह देखने लगे।

दूत चला गया।

सम्राट् उठकर खड़े हो गये। वे संयोगिता से बोले—

"मैं अभी जाकर दरबार लगाता हूँ। नीच गौरी तुझे ऐसा पाठ पढ़ाऊँगा कि तू जिन्दगी-भर याद करेगा। तूने मुझसे वादा किया था कि अब हिन्दुस्तान कभी नहीं आऊँगा। तूने विश्वसघात किया। इसका दण्ड तुझे दूँगा।"

सम्राट् ने उसी समय जाकर दरबार लगाया। उसमें यह मन्त्रणा होने लगी कि गौरी को आगे बढ़ने न दिया जाये। उसे रास्ते में ही रोककर टक्कर ली जाये।

ठीक तभी एक गुप्तचर ने यह बतलाया कि राजा जयचन्द ने मुहम्मद गौरी को बुलाया है। उन्हीं के निमन्त्रण पर सुलतान गजनी से यहाँ आया है।

अभी वह गुप्तचर जा भी नहीं पाया था कि एक और जासूस आ गया। वह बतलाने लगा कि राजा जयचन्द की पचास हजार सेना गौरी की सहायता के लिए तैयार है। वह कन्नौज से चल चुकी है और पंजाब की ओर बढ रही है।

अब पृथ्वीराज गुस्से से पागल हो उठे। वे अपने बहनोई राजा समरसिंह से बोले—"जीजाजी, आप एक लाख फौज लेकर जाइये। कन्नौज की सेना को आगे मत बढ़ने दीजिए। उसका रास्ते में ही सफाया कर दीजिए।"

इसके बाद पृथ्वीराज ने चामुण्डराय से कहा—"तुम तीन लाख फौज लेकर पंजाब की ओर बढ़ो, चामुण्डराय। मैं भी तुम्हारे पीछे आता हूँ। कुछ राजाओं की सेनायें हमारी सहायता के लिए आ गई हैं।"

चन्द कवि सम्राट् के साथ था। वह हमेशा साथ ही देता। छाया की तरह सम्राट् का साथ कभी नहीं छोड़ता। रायमल और जोधमल भी

युद्ध की तैयारी करने लगे।

राजधानी में हलचल मच गई। जिसे देखो, वही कह रहा था कि मुहम्मद गोरी ने देश पर आक्रमण कर दिया है। इस बार उस यवन को कन्नौज के राजा जयचन्द ने बुलाया है।

घर का भेदी

"सूर्यसिंह !"

"जी, महाराज ।"

"गौरी की सेना पंजाब के निकट आ गई है।"

"हाँ, राजन, दूत द्वारा यही समाचार मिला है ।"

"तुम्हें गौरी के पास जाना होगा ।"

"क्यों ?"

"गौरी से जाकर कहो कि कन्नौज से पचास हजार सिपाही लेकर मैं स्वयं आ रहा हूँ ।"

"जी ।"

"और सुनो ।"

"क्या ?"

"तुम गौरी से मिलकर सीधे अपनी सेना में मेरे पास आ जाना ।"

"यही करूँगा, महाराज ।"

"जल्दी आना, सूर्यसिंह । मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा ।"

"जो आज्ञा, महाराज ।"

कहकर सूर्यसिंह जाने की तैयारी करने लगा ।

सूर्यसिंह के जाने के बाद राजा जयचन्द स्वयं सेना का संगठन करने लगे । उन्होंने कन्नौज से कूँच कर दिया ।

इधर जयचन्द की सेना गौरी के सहयोग के लिये आगे बढ़ रही थी और उधर सूर्यसिंह मुहम्मद गौरी के खेमे में पहुँच गया ।

सिंधु नदी के उस पार गौरी की सेना ने पड़ाव डाला था । यवन सम्राट् अपने शिविर में बैठा था । उसने सूर्यसिंह को देखा, तो प्रसन्नता से खिल उठा और मगन होकर व्यस्त स्वर में कहने लगा—"कहो, कैसे आये कन्नौज के सिपहसालार ?"

"आपकी ही सेवा में हाजिर हुआ हूं, सरकार।"

"कहो।"

"हमारे राजा जयचन्द खुद पचास हजार फौज लेकर चल पड़े हैं। वे जल्दी ही आपके पास आ जायेंगे।"

"इस खुशखबरी के लिए तुम्हें मुबारकबाद देता हूं, सिपहसालार।"

"बस मैं आपको यही बतलाने आया था।"

"ठीक है, सिपहसालार! और कहो दुश्मन का क्या हाल है?"

"एक लाख फौज सिंधु नदी के उस पार आपकी सेना से टक्कर लेने के लिये पड़ी है।"

"कोई परवाह नहीं है। मैं जंग के लिये पूरी तरह तैयार हूं। अब तुम कन्नौज जाओगे, सिपहसालार?"

"नहीं।"

"फिर?"

"हमारे राजा जयचन्द फौज लेकर आ रहे हैं। मैं उन्हीं के पास जाऊँगा।"

"बहुत ठीक।"

गौरी ने इत्मीनान के साथ यह कहा और सूर्यसिंह वहां से चल दिया।

अभी सूर्यसिंह मुहम्मद गौरी के खेमे से बाहर निकला ही था कि पीछे से किसी ने धक्का देकर उसे गिरा दिया।

वह भरभराकर गिर पड़ा और आततायी की ओर घूमकर देखने लगा। जोधमल सूर्यसिंह को बन्दी बनाने का उपक्रम कर रहा था।

"जोधमल, तुम?"

"हां, गद्दार, मैं। ठहर, तुझे अभी बांधकर सम्राट् चौहान के सामने ले चलता हूं। तू देश का दुश्मन है।"

सूर्यसिंह जल्दी से उठकर खड़ा हो गया। उसके मुंह से निकला—"आस्तीन के सांप, तू दुश्मन से जाकर मिल गया। इसका मजा तुझे अभी चखाता हूं। ले, सँभाल मेरा वार।"

यह कहने के साथ सूर्यसिंह ने जैसे ही अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाली, ठीक तभी रायमल ने उसपर अपना प्रहार कर दिया। वे दांत

घर का भेदी

"सूर्यसिंह !"

"जी, महाराज।"

"गौरी की सेना पंजाब के निकट आ गई है।"

"हाँ, राजन, दूत द्वारा यही समाचार मिला है।"

"तुम्हें गौरी के पास जाना होगा।"

"क्यों ?"

"गौरी से जाकर कहो कि कन्नौज से पचास हजार सिपाही लेकर मैं स्वयं आ रहा हूँ।"

"जी।"

"और सुनो।"

"क्या ?"

"तुम गौरी से मिलकर सीधे अपनी सेना में मेरे पास आ जाना।"

"यही करूँगा, महाराज।"

"जल्दी आना, सूर्यसिंह। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।"

"जो आज्ञा, महाराज।"

कहकर सूर्यसिंह जाने की तैयारी करने लगा।

सूर्यसिंह के जाने के बाद राजा जयचन्द स्वयं सेना का संगठन करने लगे। उन्होंने कन्नौज से कूँच कर दिया।

इधर जयचन्द की सेना गौरी के सहयोग के लिये आगे बढ़ रही थी और उधर सूर्यसिंह मुहम्मद गौरी के खेमे में पहुँच गया।

सिंधु नदी के उस पार गौरी की सेना ने पड़ाव डाला था। यवन सम्राट् अपने शिविर में बैठा था। उसने सूर्यसिंह को देखा, तो प्रसन्नता से खिल उठा और मगन होकर व्यग्र स्वर में कहने लगा—"कहो, कैसे आये कन्नौज के सिपहसालार ?"

"आपकी ही सेवा में हाजिर हुआ हूँ, सरकार [illegible]

"कहो।"

"हमारे राजा जयचन्द खुद पचास हजार फौज [illegible] पड़े हैं। वे जल्दी ही आपके पास आ जायेंगे।"

"इस खुशखबरी के लिए तुम्हें मुबारकबाद देता हूँ, सिपहसालार।

"बस मैं आपको यही बतलाने आया था।"

"ठीक है, सिपहसालार! और कहो दुश्मन का क्या हाल है?"

"एक लाख फौज सिंधु नदी के उस पार आपकी सेना से टक्कर लेने के लिये पड़ी है।"

"कोई परवाह नहीं है। मैं जंग के लिये पूरी तरह तैयार हूँ। अब तुम कन्नौज जाओगे, सिपहसालार?"

"नहीं।"

"फिर?"

"हमारे राजा जयचन्द फौज लेकर आ रहे हैं। मैं उन्हीं के पास जाऊँगा।"

"बहुत ठीक।"

गौरी ने इत्मीनान के साथ यह कहा और सूर्यसिंह वहाँ से चल दिया।

अभी सूर्यसिंह मुहम्मद गौरी के खेमे से बाहर निकला ही था कि पीछे से किसी ने धक्का देकर उसे गिरा दिया।

वह भरभराकर गिर पड़ा और आततायी की ओर घूमकर देखने लगा। जोधमल सूर्यसिंह को बन्दी बनाने का उपक्रम कर रहा था।

"जोधमल, तुम?"

"हाँ, गद्दार, मैं। ठहर, तुझे अभी बाँधकर सम्राट् चौहान के सामने ले चलता हूँ। तू देश का दुश्मन है।"

सूर्यसिंह जल्दी से उठकर खड़ा हो गया। उसके मुँह से निकला—"आस्तीन के साँप, तू दुश्मन से जाकर मिल गया। इसका मजा तुझे अभी चखाता हूँ। ले, सँभाल मेरा वार।"

यह कहने के साथ सूर्यसिंह ने जैसे ही अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाली, ठीक तभी रायमल ने उसपर अपना प्रहार कर दिया। वे दौत

पीसकर चिल्लाये—"तू घर का भेदी है, सूर्यसिंह। मैं तुझे जिन्दा नहीं छोड़ूंगा।"

सूर्यसिंह आहत होकर गिर पड़ा। वह अभी सँभल भी नहीं पाया था कि जोधमल उसकी छाती पर चढ़ बैठा। उसने उसकी मुश्कें बाँध लीं।

समय आधी रात से अधिक हो चुका था। गौरी के पहरेदारों ने दोनों का सामना किया, लेकिन जोधमल तथा रायमल ने सबको मौत के घाट उतार दिया। वे बन्दी सूर्यसिंह को घोड़े पर डालकर सम्राट् के पास ले चले।

सम्राट् पृथ्वीराज चौहान भी देहली से पंजाब के लिये फौज लेकर रवाना हो चुके थे। रायमल और जोधमल उधर ही भागे चले जा रहे थे।

रास्ते में सम्राट् ने रात को पड़ाव किया। वहीं दोनों जाकर उनसे मिल गये।

सम्राट् ने जब अपने सामने बन्दी सूर्यसिंह को देखा और उसकी काली करतूतों का सब हाल सुना, तो आवेश से काँपने लगे।

शिविर में मशाल की रोशनी हो रही थी। वे सूर्यसिंह की ओर देखकर बोले—"सूर्यसिंह! मैं तुम्हें कभी क्षमा नहीं करूँगा। तुमने मेरे साथ ही नहीं, देश के साथ गद्दारी की है। बोलो, तुम्हें क्या दंड दूँ?"

"मृत्यु का दंड मुझे दीजिये, सम्राट्।"

"हाँ! तुम्हारे जैसे देशद्रोही का यही दण्ड है।"

यह कहकर सम्राट् ने जोधमल की ओर देखा। वे क्रोध-भरे स्वर में बोले—"ले जाओ इस पापी को। इसे आधा जमीन में गाड़ दो। फिर कुत्ते छोड़ दो। वे इसे नोच-नोचकर खायेंगे।"

जोधमल सूर्यसिंह को खींचकर ले जाने लगा। तभी सूर्यसिंह जोर से चिल्लाया—"दया करो, सम्राट्, ऐसी मौत मत दो।"

"ले जाओ, जोधमल। इसे बकने दो।"

जोधमल सिपाहियों के साथ सूर्यसिंह को लेकर चला गया।

रायमल सम्राट् के पास बैठ गये। उनका कहना था कि सवेरा होते ही मुहम्मद गौरी की सेना सिंधु नदी को पार करेगी। ठीक तभी हमारे ... उस पर टूट पड़ेंगे। राजा समरसिंह पूरी तरह सजग हैं और वे मौके

की प्रतीक्षा कर रहे है।

पृथ्वीराज ने एक दीर्घ-उच्छवास ली। वे रायमल से कहने लगे—"कुछ राजाओं की सेना हमारी सहायता के लिए आ चुकी है। बाकी राजधानी में यह प्रबन्ध करके आया हूँ कि जो भी सेनाएँ आये। उन्हें इधर ही भेज दिया जाये।"

"सवेरे हमें भी आगे बढ़ना है, चौहान। सिन्धु नदी पार करते ही युद्ध आरम्भ हो जायेगा। दुश्मन को आगे बढ़ने का मौका न दिया जाये। मेरी यही कोशिश है।"

रायमल और पृथ्वीराज में देर तक बातें होती रही। कोई भी नहीं सोया। सभी की आँखो से नींद भाग गई थी।

युद्ध

जैसे ही गौरी की सेना सिन्धु नदी को पार करने लगी, राजपूत सैनिक तलवारें बजाने लगे।

दोनों पक्षों में खूब घमासान युद्ध होने लगा। गौरी की सेना दो लाख थी और राजा समरसिंह के साथ केवल एक लाख ही सैनिक थे।

भारतीय सिपाही अपनी जान हथेली पर रखकर लड़ रहे थे, फिर भी गौरी की सेना आगे बढ़ी और बढ़ती ही चली गई। अभी सम्राट् की सेना दूर थी।

तराइन के मैदान में जहाँ पहले युद्ध हुआ था, वहीं दोनों सेनाएँ आमने-सामने आकर डट गईं। अब सम्राट् भी आ गये थे। दोनों पक्षों में तलवार बज रही थी। तीर छूटते; और भाले चलते। तोपें आग उगल रही थीं।

सम्राट् पृथ्वीराज का सामना अचानक जयचन्द से हो गया। वे उन्हें ललकार कर बोले—आओ जयचन्द, मैं पहले तुम्हें ही मौत के घाट उतार दूँ। तुम कितने नीच हो। तुमने देश में यवन को बुलाया है। तुम्हें शर्म नहीं आती?"

"शर्म तुझे आनी चाहिए, नीच चौहान! मेरी बेटी का अपहरण कर ले गया। मेरा हक छीनकर भारत सम्राट् बन बैठा। आज तुझे रण-क्षेत्र में न सुलाया, तो मेरा नाम जयचन्द नहीं।"

दोनों हाथी पर थे। पृथ्वीराज ने हौदे से तीर चलाया। वह जयचन्द की कनपटी को छूता हुआ निकल गया। जयचन्द ने तीर का जवाब तलवार से दिया। उसने चौहान पर तत्क्षण ही वार कर दिया।

पृथ्वीराज ने जयचन्द का वार रोका। उन्होंने अपनी ढाल अड़ा दी। जयचन्द की तलवार टूट गई।

अब पृथ्वीराज ने हाथी को लोहे की जंजीर पकड़ा दी कि वह उसे

घुमाये और जयचन्द को उसमें लपेटकर हौदे से नीचे गिरा दे।

जयचन्द ने यह देखा तो वह जल्दी से नीचे उतरा और रण-क्षेत्र से भाग गया।

मुहम्द गौरी घोड़े पर सवार था। वह ओजपूर्ण भाषण देकर अपने सिपाहियों में जोश भर रहा था।

उसका कहना था कि काफिरों को जान से मार दो। हिन्दू काफिर हैं। जिसने भी जंग में अपनी पीठ दिखलाई, उसका सिर कलम कर लिया जायेगा।

यवन सैनिकों में उत्साह आ गया। पूरे जोश के साथ लड़ने लगे।

गौरी अब भी चिल्ला रहा था—यह लड़ाई दो देशों की नही, दो मजहबों की है। इस्लाम को जिन्दा रखो। काफिर हिन्दुओं को कुचल दो। अब हिन्दूस्तान में मेरी बादशाहत होगी।"

ठीक इसी तरह गौरी का प्रधान सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक भी सैनिकों में जोश भर रहा था। उसका कहना था कि जब यह जंग जीत लोगे तो तुम्हारी तलब दुगनी कर दी जायेगी। तुम हिन्दुस्तान फतह करने आये हो। तुम्हें पीछे कदम नही हटाना है।

युद्ध पूरे पैमाने के साथ हो रहा था। दोनों ओर के मारू बाजे बजते। तोपों के गोले धांय-धांय करके छूटते। तीर सनसनाते। भाले चल रहे थे। तलवारें रक्त-स्नान कर रही थीं।

तराइन का मैदान खून से लाल हो गया। लाशों पर लाशें बिछी थीं। घायल चिल्लाते। वे पीडा से कराहते। वे पानी माँगते।

मगर कोई किसी की नही सुनता। लड़ाई खूब घमासान हो रही थी।

राजपूत सैनिकों ने मुहम्मद गौरी की सेना गाजर-मूली की तरह काट दी। वह एक-तिहाई साफ हो चुकी थी। इसीलिए गौरी की चिन्ता बढ़ी।

पृथ्वीराज का हौसला बढ़ गया। उनकी सहायता के लिए कुछ देशी राजाओं की सेनाएँ और आ गई थी।

सम्राट् ने भी अपना हाथी रणभूमि में घुमाया। वे कह रहे थे--

"सैनिकों, यह युद्ध आत्मरक्षा का नहीं, देश-रक्षा का है। देश को गुलाम होने से बचाओ, इस पवित्र भूमि से यवनों को भगा दो। जो इस लड़ाई में विजय प्राप्त करेगा, उसका वेतन चौगुना बढ़ा दिया जायेगा।"

राजपूत सिपाही जान हथेली पर लेकर युद्ध कर रहे थे। सांझ होने लगी। सूर्य अस्ताचल की ओर चला गया।

युद्ध ने विश्राम लिया। दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविर में लौट गईं।

महायुद्ध

दूसरे दिन सवेरा होते ही युद्ध फिर आरम्भ हो गया। पृथ्वीराज ने अपने सैनिकों से कहा—"आज भारतवर्ष के भाग्य का फैसला होना है। अभी तक यहाँ पर हिन्दू राज्य रहा। इस भूमि पर मुसलमान शासन करें, यवन यहाँ का सम्राट् बने, ऐसा नहीं होगा, कभी नहीं होगा।"

आज दोनों सेनाएँ जी-जान से लड़ रही थी। पृथ्वीराज सेना के बीच में थे। सहसा उनके पास एक सैनिक भागता हुआ आया। वह कह रहा था—

"गजब हो गया, सम्राट्, बहुत बड़ा गजब हो गया।"

"क्या ?"

"सरकार, जोधमलजी मार दिये गये।"

"हूँ।"

"हाँ, महाराज। कुतुबुद्दीन ऐबक ने धोखे से पीछे जोधमल की पीठ में तलवार घुसेड़ दी।"

"यह बहुत बुरा हुआ, सैनिक।"

यह कहकर पृथ्वीराज दोनों हाथों से युद्ध करने लगे।

ऐसे में ही एक सैनिक भागता हुआ सम्राट् के पास आया। वह जोर से चिल्लाया—"सम्राट्, कन्नौज के रायमल भी मारे गये।"

"ऐं! चाचाजी की हत्या किसने की ?"

"महाराज मुहम्मद गोरी ने रायमल को मार डाला।"

"ओह! यह मैं क्या सुन रहा हूँ! मेरे दो सेनापति मारे गये!"

अब पृथ्वीराज चौहान की आँखों में खून उतर आया। युद्ध पूरी गति के साथ हो रहा था। सवेरे से दोपहर हो गई किसी भी पक्ष ने हार नहीं मानी। सम्राट् का प्रधान सेनापति चामुण्डराय बिलखता हुआ अपने महाराज के सामने आया। उसके मुँह से निकल गया—अनर्थ हो नहीं,

महा अनर्थ हो गया, महाराज ! राजा समरसिंह भी मारे गये।"

"ऐं ! जीजाजी भी वीरगति को प्राप्त हो गये ! उन्हें किसने मारा, चामुण्डराय ? मुझे उसका नाम बतलाओ ?"

"महाराज। समरसिंह को कई यवन सैनिकों ने धोखा देकर घेर लिया। सबने मिलकर उनकी हत्या कर दी। यह न्याय का युद्ध नहीं, अनीति का संग्राम हो रहा है।"

अब पृथ्वीराज अधाधुंध युद्ध करने लगे। उनके सामने मुहम्मद गौरी आया। उसने आते ही सम्राट् पर वाण चला दिया।

चामुण्डराय ने यह देखा, तो वह गौरी पर शेर की तरह टूट पड़ा।

उसके मुँह से निकला—"नीच यवन, अधर्म का युद्ध कर रहा है। न्याय से लड़। तू बेईमान है। तेरी नीयत खराब है।"

"और तू ईमानदार है, काफिर ?"

यह कहने के साथ मुहम्मद गौरी ने एक तीर छोड़ा। वह सीधा आकर चामुण्डराय के सीने पर लगा।

चामुण्डराय घोड़े से नीचे गिर पड़ा। गिरते ही उसकी मृत्यु हो गई।

पृथ्वीराज ने अब अच्छी तरह समझ लिया कि वे बिलकुल अकेले रह गये हैं। उनके चारों सेनापति मारे गये। उनकी सेना बुरी तरह कट रही थी। जंग पूरी रफ्तार से हो रही थी।

वे मुहम्मद गौरी की ओर बढ़े और उसे ललकारकर बोले—"अब पता चला, गौरी, कि तुम कितने झूठे और दगाबाज हो। धोखा देना, अपना मतलब हासिल करना—यह इन्सानियत नहीं, शराफत नहीं, बहुत ही नीच काम है।"

"पृथ्वीराज, अब मौत के लिए तैयार हो जाओ। मैं मुहम्मद गौरी नहीं, तुम्हारी मौत हूँ।"

यह कहने के साथ गौरी ने सम्राट् पर तीर छोड़ दिया। वे उस वार को बचा ले गये। उन्होंने भी अपना बाण धनुष पर चढ़ाया, लेकिन दुर्भाग्य ! धनुष टूट गया। उसके दो टुकड़े हो गये।"

गौरी खूब जोर से हँसा। ऐसे में ही सम्राट् ने अपनी तलवार निकाल.

ली। वे गौरी पर वार करना ही चाहते ही थे कि तब तक कुतुबुद्दीन ऐबक के इशारे पर चालीस यवन सैनिकों ने सम्राट् को घेर लिया।

सबने मिलकर उन्हें हाथी से नीचे गिरा दिया।

सम्राट् चिल्लाये—"यह क्या बेइन्साफी है, गौरी ? यह अधर्म है। यह अन्याय है।"

"कुछ भी कहो, चौहान। अब तुम हमारे कैदी हो और हिन्दुस्तान हमारा है। सिपाहियों, पृथ्वीराज चौहान की मुश्कें बांध लो। इस कैदी को मेरे खेमे में भेज दो। ऐलान कर दो कि अब जंग बन्द कर दी जाए। पृथ्वीराज कैद हो गये। उनकी हार हो गई।"

हिन्दू सैनिक जो बचे थे, वे हथियार डाल-डालकर चल दिये। राजधानी में शोक की लहर दौड़ गई। घर-घर में आर्तनाद होने लगा।

लोग कह रहे थे कि यह देश का दुर्भाग्य है। आज से भारत का हिन्दू राज्य समाप्त हो गया। विदेशी यवन आ गया। यह धर्म का दुश्मन है। यह भारत में इस्लाम फैलायेगा। यह लोगों को जबरदस्ती मुसलमान बनायेगा।

रानी अगमा ने कटार मारकर आत्महत्या कर ली।

संयोगिता खड़े से गिर पड़ी। फिर वह उठकर खड़ी नहीं हो पाई। उसकी हृदय-गति रुक गई थी।

इस तरह सम्राट पृथ्वीराज चौहान का सर्वनाश हो गया। वे लोहे की जंजीरों से जकड़े थे और दुश्मन के खेमे में बन्दी बने बैठे थे। उनका अन्त:करण कह रहा था कि किसी तरह मौत आ जाती, तो उन्हें इस बन्धन से छुटकारा मिल जाता।

किन्तु भाग्यहीनों को माँगने से मौत कभी नहीं मिलती। वह दूर खड़ी मुस्करा रही थी और सम्राट् दु:खी थे।

--

भारत में इस्लाम

मुहम्मद गौरी ने सबसे पहला काम यह किया कि उसने बन्दी सम्राट् पृथ्वीराज चौहान को अपने विश्वासपात्र सैनिकों के साथ गजनी भेज दिया। उसकी सख्त हिदायत थी कि रास्ते में चौहान पर पहरा बहुत कड़ा रखा जाये। इसलिए पांच हजार सैनिक साथ भेजे गये।

पृथ्वीराज के लिए मुहम्मद गौरी ने यह आदेश दिया था कि चौहान को जाते ही कैदखाने में डाल दिया जाये। फिर जब वह गजनी आयेगा, तो उसकी किस्मत का फैसला करेगा।

अब मुहम्मद गौरी निश्चिन्त हो गया था। वह तराइन के मैदान से देहली की ओर चल दिया। उसने आते ही राजधानी देहली पर अपना पूर्ण अधिकार कर लिया।

हिन्दू राज्य के सभी चिह्न मिटाये जाने लगे। मन्दिर टूटे। उनके स्थान पर मस्जिदें बनने लगी।

मुहम्मद गौरी लगभग एक महीने तक देहली में रहा। उसने देहली का तख्त कुतुबुद्दीन ऐबक को सौंप दिया। उसका कहना था कि हिन्दुस्तान एक बड़ा मुल्क है। इस्लाम फैलाओ। मूर्ति पूजा बन्द करवाओ। काफिर हिन्दुओं को मुसलमान बनाओ।

कुतुबुद्दीन ऐबक ने अपने स्वामी की आज्ञा का पालन किया। उसने गुलाम वंश की नींव डाली और उसका पहला बादशाह बना।

मुहम्मद गौरी ने चलते समय कुतुबुद्दीन ऐबक को यह समझाया था कि वह अपने राज्य का विस्तार करे। हिन्दुस्तान में उसे अपनी ताकत खूब बढ़ा लेनी चाहिए।

गौरी के जाने के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक ने राज्य-विस्तार की योजना बनाई उसने पड़ोसी छोटे-छोटे राज्यों को हड़पना शुरू कर दिया।

पृथ्वीराज की पुत्री बेला का सतखण्डा पूरे देश में मशहूर था। उसके

लिए कहा जाता कि राजकुमारी बेला रोज रात को सतखण्डे पर चढ़ती। वहाँ से वह महोबे का जल रहा दीपक देखती। महोबे में उसकी ससुराल थी।

कुतुबुद्दीन ऐबक ने बेला के सतखण्डे को अपने अधिकार में ले लिया। उसने उसपर अरबी भाषा में कुरान की आयतें लिखवाई। उसका नाम कुतुबमीनार रखा। यह वही कुतुब मीनार है जिसके लिए कहा जाता है कि इसे कुतुबुद्दीन ऐबक ने बनवाया था।

इस कुतुब मीनार को देखने देश के कोने-कोने से लोग आते। विदेशी भी कुतुब मीनार पहुँचते और उसका चित्र लेते।

इस तरह पृथ्वीराज के वंश का पूरी तरह अन्त हो गया था। भारत मे इस्लाम आ गया। ये इस्लामी मूर्ति पूजा के विरोधी थे।

यह जयचन्द की देन थी। अगर वह देशद्रोही भारत में पैदा न हुआ होता, तो हमारा देश कभी गुलाम नहीं होता।

मुहम्मद गौरी खुशी-खुशी गजनी वापस जा रहा था। देहली के राजकोष में उसे बहुत बड़ा खजाना मिला था। उसने आधे से ज्यादा खजाना ऊँटों पर लदवाया। उसे गजनी ले जा रहा था।

गौरी ने कुतुबुद्दीन को यह भी समझाया था कि हिन्दुओं पर जजिया लगा दो। सभी पर कर बढ़ा दो। इससे राज्य की आमदनी बहुत अच्छी होने लगेगी।

इधर गौरी जा रहा था और उधर कुतुबुद्दीन ऐबक भारत में अपना ताण्डव-नृत्य कर रहा था। उसके पास ताकत थी। उसकी फौज बहुत बड़ी थी। उसने ऐलान कर रखा था कि जो भी हिन्दू मेरे खिलाफ सिर उठाये, उसका सिर कुचलो ही नहीं, धड़ से अलग कर दो। जो कर देने में आनाकानी करे, उसे जिन्दा जमीन में गाड़ दो।

देश में त्राहि-त्राहि मच गई। जनता पृथ्वीराज की याद करके आँखों में आँसू भर लाती। वह जयचन्द को बुरा-भला कहने लगती।

देश के सभी राज्य कुतुबुद्दीन ऐबक से पूरी तरह असन्तुष्ट थे।

इस्लाम किसी को भी प्यारा नहीं था। सभी उसका विरोध कर रहे थे। किसी ने सपने में भी नही सोचा था कि एक दिन ऐसा भी आयेगा, जब भारतवर्ष परतन्त्र हो जायेगा। वहाँ यवन आयेंगे। वे इस पवित्र देश को गुलामी की जंजीरो से जकड देंगे। यह देश का बहुत बड़ा दुर्भाग्य था।

पृथ्वीराज की आँखें

मुहम्मद गोरी गजनी आ गया। वहाँ खूब खुशियाँ मनाई गईं। कई दिन तक गजनी शहर मे रात को रोशनी होती रही। जशन मनाया गया। खैरात बँटी। गोरी के लिए यह बड़े गर्व की बात थी, जो छोटे से गजनी राज्य का स्वामी होने पर आज वह एक बहुत बड़े देश का स्वामी था। भारतवर्ष उसका गुलाम था।

तीन दिन बाद गोरी ने अपना दरबार लगाया। उसमे बन्दी पृथ्वीराज को पेश किया गया।

गोरी ने पृथ्वीराज की ओर देखा। वह मुस्कराया। उसके मुँह से निकला—"कहो, चौहान, क्या हाल है ?"

"मुझसे हाल क्या पूछते हो, गोरी ? कैदी का भी कोई हाल होता है ?"

"बोलो, तुम अपने लिए क्या फैसला चाहते हो, चौहान ?"

"कैसा फैसला ? मैंने कोई अपराध किया है क्या ?"

"तुम हार गये हो, चौहान। तुम्हारी मौत और तुम्हारी जिन्दगी इस समय मेरे हाथ मे है।"

"मैंने तुम्हारे साथ जैसा व्यवहार किया था, गोरी, तुम भी मेरे साथ वही व्यवहार करो। इसमें पूछते क्या हो ?"

"तो मैं तुम्हें आजाद कर दूँ, चौहान ?"

"हाँ, होना तो यही चाहिए।"

"नही, चौहान। नही। गोरी इतना बेवकूफ नही है कि तुम्हें आजाद कर दे।"

"तो क्या मैं बेवकूफ था ?"

"हाँ, चौहान। तुम नासमझ थे। हाथ आये दुश्मन को छोड़ना बहुत बड़ी गलती है। तुमने मुझे छोड दिया। उसका नतीजा तुम्हारे सामने है। मैं ऐसी भूल कभी नही करूँगा। इसीलिए तुम्हें गजनी लाया हूँ।"

"तो फिर मेरे लिए क्या सोचा है, गौरी !"

"तुम्हारे लिए ?"

"हां, मेरे लिए।"

"चौहान, तुम्हारी आंखें बहुत बड़ी है। मैं इन आंखों को नही देख सकता। यह फोड़ी जायेंगी। मेरे दिल को राहत तभी मिलेगी, जब तुम अन्धे हो जाओगे।"

"मगर यह इन्साफ नही है, गौरी।"

"मैं कुछ नही जानता। तुम्हारी आंखें अभी फोड़ी जायेंगी। यह मेरा हुक्म है।"

यह कहने के साथ मुहम्मद गौरी ने एक जल्लाद की ओर देखा। उसने उसे आदेश दिया—"लोहे की दो सलाखें गरम की जायें। उनसे चौहान की आंखें फोड़ो। यह काम अभी और इसी वक्त होगा।"

दरबार मे उस हुक्म के सुनते ही सन्नाटा छाकर रह गया। पृथ्वीराज शान्त खड़े थे। जल्लाद लोहे की सलाखें गरम करने चला गया।

थोड़ी देर बाद जल्लाद दो चिमटों मे गरम सलाखें पकड़कर ले आया। उसने पृथ्वीराज की दोनों आंखों में गरम सलाखें घुसेड़ दी।

तभी चौहान जोर से चीखे। वे विवश थे। बिलबिलाकर रह गये। उनकी आंखें फूट गईं और उनमे खून की धार बहने लगी।

दरबारियों ने यह दृश्य देखा, तो सभी के रोंगटे खड़े हो गये। बहुत ही रोमांचकारी दृश्य था।

जब सम्राट् चौहान की आंखें फूट गईं, तो गौरी ने सैनिकों को आदेश दिया कि वे कैदी चौहान को ले जाकर कारागार में डाल दें।

उस दिन दरबार की कार्यवाही फिर इसी जगह पर समाप्त हो गई।

गजनी में घर-घर यह चर्चा चलने लगी कि गौरी ने पृथ्वीराज की आखें फोड़ दी हैं। उसने यह अच्छा नही किया। इन्सान को इन्सान के साथ इन्सानियत का व्यवहार करना चाहिए।

सम्राट् पृथ्वीराज चौहान बन्दीगृह मे पड़े अपने भाग्य पर मन-ही-मन

रो रहे थे। वे मौत को निमन्त्रण देते। जिन्दगी से ऊब गये थे। जो भारत जैसे एक बहुत बड़े भू-भाग का स्वामी था, वह आज अनाथ की तरह अकेला दुश्मन के कैदखाने में पड़ा था। यह था घर की फूट का परिणाम।

अतीत के चलचित्र सम्राट् की आंखों के आगे सजीव होकर चल रहे थे। उन्हें राजा समरसिंह याद आये, जिन्होंने वीरगति पाई थी। नई रानी संयोगिता याद आई, जिसके कारण ही जयचन्द से विरोध बना।

सम्राट् सब कुछ भूल जाना चाहते थे। मगर स्मृतियां मानती नहीं थीं। वे एक-एक करके उनके आगे आ रही थीं।

सम्राट् को चन्द्र कवि की याद आई। उन्हें भली-भांति मालूम था कि चन्द्र कवि युद्ध में मारा नहीं गया। उसपर महल की रक्षा का भार था। उसका क्या हुआ ? इस समय वह कहां है ?

पीड़ा ऐसी असहनीय थी कि सम्राट् को एक क्षण के लिए भी चैन नहीं पड़ता था। बड़ी मुश्किल से उन्हें नींद आई। सपने में उन्होंने देखा कि राजधानी देहली में आग लग गई है। उनका महल जल रहा है।

सम्राट् चीखें सुनते। पुकारें उनके कानों में गूंजतीं। ऐसे में ही उन्होंने देखा कि चन्द्र कवि आ गया है। वह उन्हें आग से बाहर निकाल रहा है। उसका कहना है कि हम साथ ही जियेंगे और साथ ही मरेंगे। हमारा साथ चोली और दामन का है। हम दोनों जिगरी दोस्त हैं।

सपना चलता रहा। सम्राट् बहुत खुश थे। उन्हें अपने मित्र चन्द्र कवि पर गर्व हो रहा था।

सहसा सम्राट् की नींद टूट गई। वहां अन्धेरा था। जिन्दगी का अन्धेरा। हमेशा-हमेशा के लिए अन्धेरा।

आंखों की पीड़ा अब भी सही नहीं जा रही थी। वे धीरे से कराहे और उनके मुंह से निराशा-भरा स्वर निकल गया—"दुनिया के मालिक ! अब तू, मुझे उठा ले तो कुछ अच्छा हो।"

सवेरा हो रहा था। मस्जिद की अजान चौहान के कानों में पड़ी। वे बुरी तरह विचलित हो उठे।

देशद्रोही का अन्त

राजा जयचन्द अपने दरबार में बैठे थे। वे बहुत दुःखी थे। महामन्त्री से एक दीर्घ-उच्छ्वास लेकर कहने लगे—"महामन्त्री ! कोई नहीं जानता कि किस समय क्या हो जायेगा। सेनापति सूर्यसिंह का कितना बुरा अन्त हुआ। जोधमल ताव में यहाँ से चला गया। वह भी युद्ध में मारा गया। चाचा रायमल की भी रणभूमि में मृत्यु हो गई।"

"महाराज ! घर की फूट का परिणाम कभी अच्छा नहीं होता।"

"मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि सम्राट् पृथ्वीराज चौहान को गौरी अपने साथ बन्दी बनाकर ले गया।"

"कुछ भी हो, महाराज, यह कहना पड़ेगा कि देश गुलाम हो गया। भारत में यवन राज्य आ गया। ऐसा नहीं होना चाहिये था।"

इसपर जयचन्द कुछ उत्तर दें, ठीक तभी एक दूत ने आकर समाचार सुनाया कि मुहम्मद गौरी ने सम्राट् पृथ्वीराज की आँखें फोड़ दी है।

"यह बहुत अच्छा हुआ।"

कहकर जयचन्द मुस्कराये। वे महामन्त्री की ओर उन्मुख हुए और उनसे कहने लगे—"अब मैं गजनी जाऊँगा।"

"क्यों ?"

"गौरी ने वचन दिया था कि वह देहली का सिंहासन मुझे देगा।"

"महाराज, यह सपना भूल जाइये।"

"यह कैसे हो सकता है, महामन्त्री ?"

"मेरी राय तो यही है कि आप गजनी मत जाइये।"

"मैं अवश्य जाऊँगा।"

"आपकी इच्छा।"

कहकर महामन्त्री ने एक लम्बी साँस ली।

राजा जयचन्द गजनी के लिये रवाना हो गये। रास्ते में वे सोचते जा रहे थे कि जो सिंहासन मेरे नाना ने मुझे नहीं दिया, अब वह सहज ही मुझे प्राप्त हो जायेगा। तकदीर इसी को कहते हैं और भाग्य इसी का नाम है।

मंजिल पर मंजिल तय करते हुए जयचन्द गजनी पहुँच गये। वे अविलम्ब गौरी के दरबार में पहुँचे। उनके मुँह से निकला—"आपको बधाई है, गौरी। आपने सम्राट् पृथ्वीराज चौहान पर विजय पाई।"

"आपकी हमदर्दी का बहुत-बहुत शुक्रिया है, राजा साहब।"

"आपका इकबाल बुलन्द रहे, गौरी साहब।"

"कहिये, राजा साहब, कन्नौज से यहाँ तक आने की तकलीफ कैसे की?"

"आपके पास आया हूँ।"

"क्यों?"

"आपने वचन दिया था कि जीत हासिल होने पर आप देहली का सिंहासन मुझे देंगे।"

"आपको?"

यह कहकर मुहम्मद गौरी खूब जोर से हँसा। वह जयचन्द से कहने लगा—"आपकी बहादुरी जंग के मैदान में मैंने अच्छी तरह देख ली। बस अब आप जाइये।"

"एँ!"

"हाँ! आपको जाना पड़ेगा।"

"और आपका वादा?"

"कैसा वादा?"

"देहली का तख्त देने का।"

"वह ख्वाब भूल जाइये, राजा साहब।"

"यह आप क्या कह रहे हैं?"

"मैं सच कह रहा हूँ। जब तक मेरा तमाम नुकसान और जंग का खर्च पूरा नहीं हो जायेगा, तब तक देहली का तख्त किसी को भी नहीं मिल सकता।"

"आपके मुंह से ये बातें शोभा नही देती । आपको मालूम होना चाहिये कि मेरे कारण ही आपकी जीत हुई और आप मुझे ही आंखें दिखा रहे है ।"

इसपर मुहम्मद गोरी कुछ नही बोला । वह अपने प्रमुख सेनापति से कहने लगा—"राजा साहब को समझा दो, सिपहसालार ।"

"जी हुजूर ।"

कहकर सेनापति जयचन्द की ओर उन्मुख हुआ । वह शर्मिन्दा करता हुआ जयचन्द से कहने लगा—"आप खुशी से जा सकते हैं, राजा साहब । देहली का तख्त आपको नही मिलेगा ।"

"क्या कहा ? तख्त मुझे नही मिलेगा ।"

"नही, कभी नही ।"

"क्यों ?"

"आपका ईमान ठीक नही है ।"

"मेरा ?"

"हां, आपका ।"

"कैसे ?"

"जब आप अपनी कौम और रिश्तेदार के न हुए, तो हमारे कैसे हो सकते है ? आप पर यकीन करना खुद अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना है ।"

"मेरे साथ दगाबाजी ?"

"जबान पर लगाम रखो, राजा साहब ।"

"मेरी जबान कोई नही बन्द कर सकता ।"

"मैं बन्द करूंगा तेरी जबान ।"

यह कहने के साथ मुहम्मद गोरी सिंहासन से कूद पड़ा ।

वह जयचन्द के सामने आ गया और आंखें तरेरते हुए बोला—"चुपचाप यहां से चले जाओ, राजा साहब ।"

"मुझे मेरा हक चाहिए ।"

"वह नही मिलेगा ।"

"नही ?"

"हाँ, नहीं।"

"तो ले, नीच !"

यह कहने के साथ जयचन्द ने अपनी तलवार निकाल ली। वे गौरी पर वार करना चाहते ही थे कि पीछे से सेनापति ने खंजर उनकी पीठ में भोंक दिया।

राजा जयचन्द चीख मारकर गिर पड़े। कुछ देर तक वे छटपटाये; फिर उनकी जीवन-लीला समाप्त हो गई।

"इस मुल्क के गद्दार की लाश को बाहर ले जाकर फेंक दो।"

मुहम्मद गौरी के इस आदेश का तत्क्षण पालन किया गया।

उसके बाद गौरी के दरबार मे यह चर्चा चलती रही कि हिन्दुस्तान के राजाओं मे आपस मे फूट है। अगर उनमें एका होता, तो पृथ्वीराज पर फतह कभी नही मिल सकती थी।

गौरी बहुत प्रसन्न था कि उसकी राह का कांटा जयचन्द भी अब इस दुनिया मे नही रहा। अब वह कन्नौज के राज्य को भी अपने राज्य में मिला लेगा। हिन्दुस्तान पर धीरे-धीरे उसका पूरा अधिकार हो जायेगा।

इस तरह गौरी के हर्ष का पारावार न था।

चन्द्र कवि

युद्ध में जिस समय सम्राट् पृथ्वीराज चौहान को छल-बल से बंदी बनाया गया, तब चन्द्र कवि दूरी पर युद्ध कर रहा था। उसने अपने दल के सफेद झंडे देखे तथा सैनिकों को भागते पाया, तो फौरन ही समझ गया कि उसके सम्राट् की हार हो गई है।

वह भागा-भागा वहाँ पहुँचा, जहाँ सम्राट् का मोर्चा था। वहाँ जाते ही पता चला कि चौहान को गौरी ने बेईमानी से कैद कर लिया और अपने खेमे में भेज दिया है।

उस समय चन्द्र कवि ने गौरी के खेमे में जाना उचित नहीं समझा। उसे भय था कि सम्राट् के साथ उसे भी बन्दी बना लिया जायेगा।

चन्द्र कवि ने दूरदर्शिता से काम लिया। उसका सिद्धांत था कि जो भी काम करता, सबसे पहले उसका परिणाम सोच लेता। उसने देखा कि यवन की सेना आँधी और तूफान की तरह देहली की ओर बढ़ी चली जा रही है। इसीलिये वह भी देहली के लिये रवाना हो गया।

चन्द्र कवि गुप्त रास्तों से देहली की ओर जा रहा था। यही कारण था कि उसे पहुँचने में देर लगी। वहाँ जब वह पहुँचा, तो गौरी की सेना उससे पहले ही पहुँच चुकी थी।

गुप्त सूत्रों से चन्द्र कवि को मालूम हुआ कि रानी असमा ने आत्म-हत्या कर ली है। छोटी रानी संयोगिता ने भी अपने प्राण दे दिये हैं। खजाने पर यवन का अधिकार हो गया है। रनवास की सभी नारियाँ जौहर की आग में जल गई हैं।

चन्द्र कवि खूब जोर से रोया। वह देर तक रोता रहा। जमुना के किनारे आया। कुछ देर तक वहाँ बैठा रहा। फिर एक ओर चल दिया।

चन्द्र कवि सोच रहा था कि अब उसे क्या करना चाहिए। उसके मित्र के प्राण संकट में हैं। गौरी उसे गजनी ले गया है।

एक महीने तक चन्द्र कवि इधर-उधर भटकता रहा। जब उसे मालूम हो गया कि गौरी गजनी के लिए रवाना हो गया है, तो वह भी घोड़े पर

सवार हुआ और गजनी की ओर चल दिया।

जब चन्द्र कवि पंजाब तक पहुँच गया, तो अचानक उसकी तबीयत खराब हो गई। उसने अपना परिचय किसी को भी नहीं दिया। एक किसान के घर मेहमान बना पड़ा रहा। वहीं उसने सुना। एक रात को किसान दम्पति आपस में बातें कर रहे थे।

किसान ने कहा—"तुमने कुछ सुना ?"

"क्या ?"

"पृथ्वीराज चौहान को मुहम्मद गौरी ने यहाँ से ले जाकर कैद में डाल दिया।"

"एँ! यह तो बहुत बुरा हुआ।"

"यही नहीं। उस जालिम ने हमारे बादशाह की आँखें फोड़ दी। उसे अन्धा कर दिया।"

"पृथ्वीराज ने गौरी के साथ नेकी की थी। अगर उसे छोड़ न दिया होता, तो आज यह नौबत क्यों आती ?"

"पृथ्वीराज कैद में हैं। इससे अच्छा तो यह होता कि वह दुष्ट यवन उनकी जान ले लेता।"

चन्द्र कवि ने यह बातें सुनी। उसके कलेजे में हुक उठी। वह तिल-मिलाकर रह गया। अब उससे लेटा नहीं रहा गया। वह उठकर बैठ गया और गहरी चिन्ता में डूबकर सोचने लगा।

चन्द्र कवि के अन्तःकरण से कहा—"तुम गजनी जाओ, चन्द।"

"गजनी ?"

"हाँ, गजनी।"

"वहाँ जाकर मैं क्या करूँगा ?"

"तुम जाओ और गौरी से मिलो।"

"मुझे देखते ही गौरी बन्दी बना लेगा।"

"तुम कूटनीति से काम लो, चन्द्र कवि।"

"कैसी कूटनीति ?"

"गौरी से जाकर हँसकर मिलो। उसके आगे दोस्ती का हाथ बढ़ा दो। तुम कवि हो। तुम्हारा वह आदर करेगा।"

"लेकिन मुझे भविष्य पर भरोसा नहीं होता।"

"तुम जाओ। भविष्य तुम्हारा साथ देगा।"

चन्द्र कवि को अन्त करण की बातें बहुत अच्छी लगी। उसने मन-ही-मन निश्चय कर लिया कि सवेरा होते ही वह गजनी के लिए रवाना हो जायेगा।

प्रभात की वेला मे जैसे ही सूरज की पहली किरण फूटी, चन्द्र कवि ने किसान दम्पति से विदा ली। उनका बहुत आभार प्रगट किया। फिर वहाँ से अपनी मंजिल की ओर चल दिया। उसे गजनी पहुँचने की बहुत ही जल्दी हो रही थी।

दर्रा खैबर की घाटी से चन्द्र कवि गुजर रहा था। अभी गजनी दूर थी। मगर उसका अन्त करण कहता कि अगर उसके पंख होते, तो वह उड़कर गजनी पहुँच जाता।

चन्द्र कवि चला जा रहा था। रात्रि मे उसने एक जगह पड़ाव किया। बुरी तरह थक गया था। इसीलिए वहाँ दो दिन ठहर गया।

यह काबुल की सीमा थी। चन्द्र कवि अब अफगानिस्तान आ गया था। वहाँ उसने राहगीरो के मुँह से सुना कि कन्नौज के राजा जयचन्द गजनी गये थे। वे मुहम्मद गौरी से देहली का तख्त माँग रहे थे। उनकी गौरी से झड़प हुई। दोनो का झगड़ा हो गया। राजा जयचन्द की हत्या कर दी गई। उनकी लाश दरबार से बाहर फेंक दी गई।

चन्द्र कवि को बहुत खुशी हुई। उसके अन्त करण ने कहा—"जयचन्द को अपने किये का परिणाम भली-भाँति मिल गया। वह देश-द्रोही था, इसीलिए उसका बहुत बुरा अन्त हुआ।

चन्द्र कवि आगे बढ़ा। वह काबुल से गुजरा। अब गजनी करीब आ गई थी।

चन्द्र कवि ने जब गजनी के ऊँचे-ऊँचे महल दूर से देखे, तो दु.खी हो कर सोचने लगा कि यह वही गजनी है, जहाँ का महमूद गजनवी भारत लूटने आता था। उसको मरे दो सदियाँ भी नही बीती कि यह गौरी भारत का दुश्मन बनकर आ गया। हाय रे दुर्भाग्य ! सोने की चिड़िया कहा जाने वाला भारत आज यवन का गुलाम बन गया है।

चन्द्रकवि और गौरी

चन्द्र कवि गजनी आ गया। वह गौरी के दरबार में पहुँचा और अपने आने की सूचना दी।

गौरी ने जब सुना कि सम्राट् पृथ्वीराज चौहान का राजकवि तथा अभिन्न मित्र चन्द्र कवि आया है, तो उसने फौरन ही हुक्म दिया—"चन्द्र कवि को आदर के साथ दरबार में ले आओ।"

चन्द्र कवि ने आते ही गौरी को अभिवादन किया।

गौरी मुस्कराया। वह धीरे से बोला—"कहो, हिन्दुस्तान के शायर, कैसे तकलीफ की?"

"आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ गजनी सम्राट्।"

"मेरे लायक क्या खिदमत है?"

"आपकी मेहरबानी के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं…।"

कहते-कहते चन्द्र कवि रुक गया।

"तुम चुप क्यों हो गये, शायर?"

"कैसे कहूँ?"

"जो कहना है, बेफिक्र होकर कहो, शायर। मेरी तरफ से तुम्हें पूरी छूट है।"

"मैं अपने मित्र चौहान से मिलने आया हूँ।"

"लेकिन यह मुमकिन कैसे हो सकता है?"

"क्यों?"

"पृथ्वीराज कैद में है और वह अन्धा भी हो गया है।"

"सुना है। मुझे मालूम है।"

"फिर?"

"मैं एक बार अपने मित्र को देखने और उससे दो बातें करना चाहता हूँ।"

"तुम्हारी यह ख्वाहिश जरूर पूरी होगी। मुझे सोचने का मौका दो।"

यह कहकर गौरी ने एक दरबारी की ओर देखा और उससे कहने लगा—"ये हिन्दुस्तान के बहुत बड़े शायर हैं। इन्हें इज्जत के साथ ले जाओ और मेहमानखाने में ठहराओ।"

चन्द्र कवि उस दरबारी के साथ चला गया। उसके बाद गौरी ने यह समस्या दरबारियों के सामने रखी कि चन्द्र कवि को पृथ्वीराज से मिलने दिया जाये या नहीं।

सभी दरबारी अपना-अपना मत प्रगट करने लगे। किसी ने कुछ कहा और किसी ने कुछ। मगर गौरी की समझ में कुछ भी नहीं आया। वह सोचता ही रह गया और किसी भी नतीजे पर पहुँच नहीं पाया।

दूसरे दिन दरबार फिर लगा। उसमें चन्द्र कवि को बुलाया गया। उसे बैठने के लिए गौरी ने ऊँचा सिंहासन दिया। फिर वह सम्मान के साथ बोला—"कहिये, शायर साहब, आपको कोई तकलीफ तो नहीं हुई।"

"हुजूर का इकबाल बुलन्द रहे। मैं बड़े आराम से रहा। कहिये आपने मेरे लिए क्या सोचा है?"

"मैंने अभी कुछ भी नहीं सोचा। यह जरूर चाहता हूँ कि तुम एक बार चौहान से मिल लो।"

"तो अभी मिला दीजिए।"

"अभी?"

"हाँ, अभी।"

"शायर साहब, आपकी ख्वाहिश पूरी होगी, मैंने सुना है और सारा हिन्दुस्तान जानता है कि तुम्हारा दोस्त चौहान आवाज पर तीर मारता है। यह कैसा कमाल है! मैं भी इसे देखना चाहता हूँ।"

"हाथ कंगन को आरसी क्या, गौरी साहब? मेरा मित्र अन्धा हो गया है, उसे दिखाई नहीं पड़ता, लेकिन फिर भी शब्दवेधी बाण चलायेगा। उसका निशाना कभी चूक नहीं सकता। यह मेरी जिम्मेदारी है।"

"तुम्हें इतना यकीन है चौहान पर?"

"हाँ, मुझे पूरा विश्वास है।"

"तो फिर मैं इसका इन्तजाम करता हूँ। चौहान को अपना कमाल भरे दरबार में दिखलाना होगा।"

"मैं कुछ कहना चाहता हूँ, गौरी साहब ?"

"क्या ?"

"अगर सम्राट् चौहान ने आपके कहने के मुताबिक निशाने पर तीर मार दिया, तो आप उन्हें क्या इनाम देंगे ?"

"मैं तुम्हारे दोस्त को जिन्दगी-भर के लिए आजाद कर दूंगा। यह मेरी शर्त है, मगर वह हिन्दुस्तान नही जा सकता। इसपर पाबन्दी रहेगी।"

"मुझे इसमे तसल्ली नही हुई गौरी साहब।"

"तो और क्या चाहते हो, शायर साहब ?"

"मैं···।"

अभी चन्द्र कवि इतना ही कह पाया था कि गौरी बीच में बोल उठा—"मैं चौहान के लिए अलग महल बनवा दूंगा। तुम अपने दोस्त के साथ उसी मे रहना, शायर। हमारे खिदमतगार हमेशा तुम लोगों की खिदमत में रहेंगे।"

"आपकी मेहरबानी के लिए धन्यवाद, मगर मैं यह भी नही चाहता हूँ।"

"तो फिर तुम्हारा इरादा क्या है ?"

"मैं अपने दोस्त को लेकर गजनी की सरहद से बाहर चला जाऊँगा। अब हमारा हिन्दुस्तान मे क्या रहा ?" वहां के जलते हुए चिराग बुझ गये हैं। हम कही दूर जंगल मे निकल जायेंगे। वही जिन्दगी के बाकी दिन गुजार देंगे।"

"जो तुम चाहते हो, चन्द्र कवि, वही होगा, मै वही करूँगा। अच्छा, अब एक बात बतलाओ।"

"क्या ?"

"चौहान की निशानेबाजी देखने के लिए गजनी के सभी लोग आयेंगे। वे कैसे तीर चलायेंगे ? उसके लिए क्या इन्तजाम करना होगा ?"

"सरकार मैं बतलाता हूँ।"

"आप लोहे के बड़े-बड़े तवे दरबार में मँगवाइये। उनपर बाँस गाड़े जायेंगे। चार बाँसों की ऊँचाई पर शून्य बनेगा। वह मंच भी चौबीस गज ऊँचा होगा। उसपर आप बैठिये। आपके तख्त के ऊपर भी एक तवा होगा। जब आप आवाज लगायेंगे, तभी चौहान का तीर छूटेगा। वह सबसे ऊपर वाले तवे में जाकर लगेगा।

"कमाल है शायर साहब। तुम्हारा दोस्त वाकई में एक बेहतरीन इन्सान है। मुझे निहायत अफसोस है कि मैंने उसे अन्धा करवा दिया।"

"गया वक्त फिर हाथ कभी नहीं आता, गौरी साहब। जो कुछ भी हुआ, उसे भूल जाइये—और आगे की देखिये।"

"ठीक है। तुम जाओ और कैदखाने में जाकर चौहान से मिलो। उसे अच्छी तरह समझा देना कि अगर उसका निशाना सही लग गया, तो उसे आजाद कर दिया जायेगा।"

"आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।"

"तुम कल तक चौहान के साथ ही रहोगे। कल दरबार लगेगा। उसमें चौहान की निशानेबाजी का तमाशा एक मैं ही नहीं, पूरी गजनी देखेगी।"

चन्द्र कवि ने गौरी को अभिवादन किया। वह दो सैनिकों के साथ कैदखाने की ओर चल दिया। वह बहुत प्रसन्न था। खुशी उसमें समा न पाकर फूटी पड़ रही थी।

चन्द्र कवि और पृथ्वीराज

सम्राट् चौहान की आँखों के आगे अन्धेरा छा रहा था। यह एक ऐसा अन्धकार था, जो उनकी जिन्दगी के लिए एक अभिशाप बन गया था। वे मन-ही-मन ईश्वर से विनय कर रहे थे कि किसी तरह मौत आ जाती और उन्हें जिन्दगी मे छुटकारा मिल जाता।

सहसा कैदखाने का दरवाजा खुला। सम्राट् समझे कि कोई पहरेदार आया है। उनके मुंह से सहज स्वर मे निकल गया—"कौन ?"

"मैं हूँ। तुम्हारा मित्र चन्द्र कवि।"

"ओह ! प्यारे चन्द्र ! मेरे दोस्त ! मेरे मित्र ! तुम ? मैं सपना तो नही देख रहा हूँ ?"

"यह सपना नही, सम्राट्, सत्य है।"

यह कहने के साथ चन्द्र कवि ने सम्राट् को अपनी बाँहों में समेट लिया। दोनों एक-दूसरे से गले मिले। उनके आँसू आ गये। उनके स्वर गीले हो गये।

देर बाद चन्द्र कवि के मुंह से निकला—"यह सब क्या हो गया, सम्राट् ? मैं जीवित हूँ। मुझे मौत नही आई। आप अन्धे हो गये। आपका राज्य चला गया। आप···।"

"मित्र चन्द्र। जब भाग्य रुठता है, तो ऐसे ही दिन आते हैं। भाग्य की शिकायत मत करो। तुम आ गये। मुझे मेरी दुनिया मिल गई। विपत्ति मे मित्र ही काम आता है। तुमने इस कहावत को चरितार्थ कर दिया, मेरे दोस्त।"

"सम्राट्, मैं कुछ करने आया हूँ। मैंने जो सोचा है, मेरा वह सपना जरुर साकार होगा।"

"तुमने क्या सोचा है, मित्र ?"

चन्द्र कवि इसपर सम्राट् के कान के पास मुंह ले गया। उसे भय

था कि बन्दी-गृह के दरवाजे पर गौरी के जासूस खड़े होंगे। उन्हें उसकी हिदायत होगी कि वे छिपकर हम दोनों की बातें सुनें।

यही कारण था। इसीलिए चन्द्र कवि चौहान के कान में फुसफुसाने लगा। वह देर तक अपनी योजना सम्राट् को समझाता रहा।

पृथ्वीराज ने चन्द्र कवि की बातें सुनी, तो वे बहुत खुश हुए। उनके मुँह से यह स्वर निकल गया—"इतिहास तुम्हें कभी नहीं भूलेगा, मेरे दोस्त। तुमने हिन्दुस्तान की लाज रखी है। तुम भारत माँ के लाल हो। यह तुम्हारा ही साहस था, जो अपनी जान हथेली पर रखकर गजनी आये।"

दोनों मित्रों में दिन-भर बातें हुईं। वे रात को भी सोये नहीं। बातों में ही व्यस्त रहे।

पृथ्वीराज ने जब सुना कि रानी अगमा ने आत्महत्या कर ली, तो वे चीख मारकर रह गये।

संयोगिता की हृदय-गति रुक गई। अन्तःपुर की स्त्रियों ने जौहर कर लिया।

यह सारी बातें सम्राट् को ऐसी लग रही थी, मानो कोई उनके घावों पर नमक छिड़क रहा हो।

सवेरा हो गया। चन्द्र कवि के मुँह से निकला—"तैयार हो जाओ, सम्राट्, सवेरा हो चुका है। आज हम लोगों की तकदीर का फैसला होगा।"

"मैं तैयार हूँ, दोस्त। मुझे एक ही दुख है कि मैं युद्ध में वीरगति को प्राप्त नहीं हुआ। मुझे जन्म-भूमि छोड़नी पड़ी। मैं बन्दी बनाया गया। यह मेरा कितना बड़ा दुर्भाग्य है!"

"सम्राट्, अतीत की बातें भूल जाइये। घर की फूट देश की दुश्मन बन गई। संयोगिता के प्रेम ने आपको राज्य-कार्य से विमुख कर दिया। खैर, छोड़िये और मैंने जो योजना आपको समझाई है। उसपर ध्यान दीजिये।"

पृथ्वीराज को ऐसा लग रहा था कि अब उनके दुर्भाग्य का थोड़ा ही समय शेष रह गया है। उन्हें मुक्ति मिलेगी। उन्हें शान्ति मिलेगी।

उन्हे सन्तोप होगा। जब तक यह ससार है। उनका और उनके साथ चन्द्र कवि का नाम भी गर्व से लिया जायेगा।

चन्द्र कवि प्रतीक्षा कर रहा था कि कब बन्दी-गृह का दरवाजा खुलता है और कब वह अपने मित्र के साथ दरबार मे जायेगा ?

दोनो मित्र बहुत प्रसन्न थे। उनमे हँस-हँसकर बातें हो रही थीं। सम्राट् इस समय भूल चुके थे कि वे बन्दीगृह में है। उन्हे अपने मित्र चन्द्र कवि पर गर्व हो रहा था।

सवेरे का पहला पहर बीत चुका था। अभी तक बन्दीगृह के किवाड नही खुले थे। दोनों मित्रो को उसी की प्रतीक्षा थी।

गौरी के दरबार की रौनक

सबेरा होते ही मुहम्मद गोरी के दरबार में हलचल मच गई। अभी बादशाह दरबार में नहीं आया था। सभी लोगों की जबान पर एक ही बात थी कि आज हिन्दुस्तान के बादशाह पृथ्वीराज चौहान तीर का निशाना लगायेंगे। उसी के लिये दरबार में मंच बनाया जा रहा है।

पूरे गजनी शहर में यह चर्चा जोर पकड़ गई थी कि अगर हिन्दुस्तान के बादशाह ने तीर सही निशाने पर मार दिया, तो हमारे शहंशाह उन्हें आजाद कर देंगे।

कोई कहता कि सुना है, पृथ्वीराज चौहान आवाज पर तीर मारते हैं। उन्हें यह अजीब कमाल हासिल है।

किसी का कहना था कि आज दरबार में सभी के लिये खुली छूट है। हर आदमी चौहान का कमाल देखेगा।

मुहम्मद गोरी दरबार में आया। वह आते ही मंच का निरीक्षण करने लगा। वह बहुत प्रसन्न था। उसका अन्तःकरण कह रहा था कि आज उसके दरबार में लोग तमाशा देखेंगे कि चौहान आवाज पर तीर कैसे मारता है।

हरम की बेगमों ने भी अपनी ख्वाहिश जाहिर की कि वे भी चौहान का कमाल देखना चाहती हैं। इसीलिये उनकी व्यवस्था भी की जाने लगी।

सभी बेगमें झरोखों में आकर बैठ गईं। वे इन्तजार करने लगीं कि चौहान दरबार में कब आते हैं।

दोपहर हो गई थी। मुहम्मद गोरी ने अपने मंत्री की ओर देखा। वह हँसकर पूछने लगा—"सब तैयारी पूरी हो गई, वजीरे आजम?"

"हाँ, जहाँपनाह।"

"तो चौहान को बुलवाया जाये?"

"बुलवाइये, हुजूर।"

"एक बात बतलाइये, वजीरे आजम?"

"जी सरकार।"

"अगर चौहान ने तीर निशाने पर मार दिया, तो ?"

"तो आप उसे आजाद कर देंगे।"

"यही सोच रहा हूँ।"

"आपने शायद चन्द्र से वादा किया है कि सही निशाना लगने पर आप उसके दोस्त चौहान को रिहा कर देंगे।"

"कैसी बातें करते हो वजीरे आजम? इतना आसान नहीं है यह कि चौहान सही निशाना लगा दे।"

'यह ठीक है; लेकिन···।"

"लेकिन क्या ?"

"आपने भरे दरबार में जो वादा किया है, उसे हर हालत में निभाना पड़ेगा।"

"यह कोई जरूरी नहीं है, वजीरे आजम।"

"एँ !"

"हाँ।"

"फिर ?"

"जैसा मौका देखूंगा, वैसा करूँगा। पहले चौहान को दरबार में तो आने दो।"

"तो चौहान को बुलवाया जाये ?"

"बेशक, बेशक।"

महामंत्री ने सैनिकों को आज्ञा दी कि वे बन्दीगृह में जायें और हिन्दुस्तान के बादशाह को कड़े पहरे में यहाँ ले आयें।

इधर सैनिक पृथ्वीराज को लेने के लिए चल दिये थे, उधर मुहम्मद गौरी दरबार में अब भी खड़ा था। वह चारों ओर निगाह दौड़ा-दौड़ाकर देख रहा था कि कहीं कोई कमी तो नहीं रह गई।

झरोखों में बेगमें बैठी थीं, मुँह-लगी बाँदियाँ आँखों में जिज्ञासा लिये खड़ी थीं। उनमें आपस में फुसफुसाहट हो रही थी कि

चौहान हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा बहादुर है। अगर इसके साथ उसके मौसेरे भाई राजा जयचन्द ने दगा न की होती तो यह शेर कभी पिंजड़े मे बन्द नही होता।

सभी दरबारी उस समय की प्रतीक्षा कर रहे थे, जब···चौहान का तीर छूटेगा और वह निशाने पर जाकर लगेगा।

अन्य दिनों की अपेक्षा आज दरबार खूब अच्छी तरह सजाया गया था। झाड़-फानूसों की कमी नही थी। वे रंग-बिरंगी जगह-जगह लटक रहे थे। हीरे-जवाहरात सिंहासन मे जगमगा रहे थे। सुगन्ध ऐसी आ रही थी कि चित्त प्रसन्न हो जाता था।

गजनी की जनता आँधी और तूफान की तरह उमड आई थी। लोग एक-दूसरे से कहते, आपस मे कानाफूसी करते कि चौहान आने वाले है। यह मौका उन्हे इसलिए दिया गया है कि उनके शायर दोस्त चन्द्र हिन्दुस्तान से आये है।

दरबार के बाहर भी अपार जनसमूह उमड आया था। नौबतखाने मे नगाड़े पूरी गति के साथ बज रहे थे। ऐसा लगता था कि आज कोई बहुत बडा जशन है। इतनी खुशी तो उस दिन भी नही मनाई गई थी, जब सुलतान हिन्दुस्तान जीतकर लौटे थे।

एक बूढ़ा पागल फकीर बाहर खडा चिल्ला रहा था—"है कोई अल्लाह का प्यारा, जो दे खुदा की राह पर ?"

एक सिपाही ने उसे धक्का दिया। वह डाँटकर बेरहमी के साथ बोला—"हट जा, फकीर ! लगता है कि तेरी शामत आई है। रास्ते मे खडा है।"

फकीर उठकर खडा हो गया। उसके मुँह से निकला—"तू इन्सान को मिट्टी-कूडा समझता है, नादान। अल्लाह के दरबार मे देर है, लेकिन अन्धेर नही।"

इसपर सैनिक ने फकीर के दुबले शरीर पर कोड़े बरसाने शुरू कर दिये। उसने उसे फिर गिरा दिया और डाँटकर बोला—"खुदा के बन्दे, खुदा के पास जाना नही है ? तेरा खुदा तुझे बुला रहा है। चल, हट।"

अब फकीर चीखता हुआ कहने लगा था—"जो इन्सान को सताते है,

खुदा उनपर कभी रहम नही करता। तुझे क्या मालूम नादान। आज की यह खुशी रंज और गम में बदल जायेगी। मेरी यही दुआ है।"

"इस बदतमीज को यहाँ से दूर कर दो। यह बद्दुआ देता है।"

दूसरे सिपाही ने यह कहा। वह फकीर को घसीटता हुआ एक ओर ले चला।

"तू ही नही। तेरा शहशाह भी नेस्तनाबूद हो जायेगा। जिसे गरूर होता है, अल्लाह उसपर आफत के बादल बरसाता है।"

फकीर बद्दुआ दे रहा था। सिपाही उसे खीचते हुये दूर ले जा रहे थे।

कुछ लोग इसके लिए कह रहे थे कि शाही नौकर फकीरों के साथ भी रहम नही करते। वे इन्सान होकर खुदा से भी नही डरते।

बन्दीगृह के फाटक से लेकर दरबार तक रास्ते पर दोनो ओर लोगो की अच्छी-खासी भीड़ लग रही थी। सभी उत्सुक खड़े थे। सभी की आँखें प्रतीक्षा मे थी कि सम्राट् चौहान कब आते है।

बहुत से लोगों ने सम्राट् पृथ्वीराज को देखा नही था। इसीलिए वे अधीर हो रहे थे। वे देखना चाहते थे कि हिन्दुस्तान का बादशाह कैसा है। सुना है कि उसका सीना गज-भर चौड़ा है। उसकी आँखों मे मशाल जलती थी। इसीलिए हमारे शहंशाह मुहम्मद गौरी ने उसकी आँखें फोड दी, अब वह अन्धा हो गया है।

शब्दवेधी बाण

जैसे ही बन्दीगृह के किवाड़ खुले। सम्राट् चौहान सजग हो गये। वे चन्द्र कवि से बोले—"चलो, चन्द्र कवि। शायद लोग हमें बुलाने आये हैं।"

चन्द्र कवि को भी प्रसन्नता हुई। दोनों मित्र सैनिकों के साथ दरबार की ओर चल दिये।

गजनी की जनता दोनों को देख रही थी। लोग ताज्जुब कर रहे थे कि हाथी जैसी देह वाला चौहान गौरी से हार कैसे गया?

किसी-किसी का अन्त: करण कह रहा था कि हिन्दुस्तान की जंग में हमारे सुलतान ने ईमानदारी से काम नहीं लिया। वे धोखा देकर चौहान को कैद कर लाये।

दोनों मित्र चले जा रहे थे। दरबार करीब आ गया। नौबत के नगाड़े की आवाज उनके कानों में स्पष्ट पड़ने लगी।

अब चौहान ने दरबार में प्रवेश किया। चन्द्र कवि ने आते ही गौरी को अभिवादन किया।

गौरी मुस्कराया और चन्द्र कवि से कहने लगा—"कहिये, शायर साहब, आपको कोई तकलीफ तो नहीं हुई?"

"कैसी बातें करते हैं, गौरी साहब? आपके हुजूर में मुझे तकलीफ हो सकती है?" "तुम्हारे कहने के मुताबिक मैंने सारा इन्तजाम कर लिया है। देखो, इस मंच में कोई कमी तो नहीं रह गई?"

चन्द्र कवि ने मंच देखा। वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसके मुँह से निकला—"बहुत ठीक। अब आप एक काम कीजिए।"

"क्या?"

"आप मंच के सबसे ऊपर निकल जाइये। आपके ऊपर जो तवा है, जब आप मंच पर से आवाज देंगे, तभी चौहान का तीर छूटेगा।

वह सीधा जाकर तवे में लगेगा।"

"ठीक है, शायर साहब। मैं ऊपर जाता हूँ।" "हाँ, अभी तमाशा देखिये।"

गोरी हँसने लगा। वह हँसता हुआ सीढ़ियाँ चढ़कर मच के ऊपर पहुँच गया।

इधर सम्राट् पृथ्वीराज चौहान के हाथ में धनुष दिया गया। बाण भी उन्हें पकड़ा दिया गया।

चन्द्र कवि ने दाहिना कन्धा थपथपाया। उसने सबके सामने कहा—"बस चौहान। इसी तरह तैयार रहो। जैसे ही गोरी साहब आवाज दें, बस तुम्हारा, तीर छूट जाना चाहिए। सारी जनता तुम्हारा कमाल देखने के लिए बैचेन हो रही है।"

पृथ्वीराज ने धनुष की प्रत्यंचा पर बाण चढ़ाया। वे प्रतीक्षा करने लगे कि शब्द होते ही बाण छोड़ देंगे।

ऊपर मंच पर बैठा गोरी यह सब देख रहा था। वह जोर से चिल्लाया—"हाँ चौहान, तुम्हें यहीं पर तीर मारना है। बस तीर छोड़ दो। देखें तुम्हारा कमाल कैसा है?"

जैसे ही गोरी ने आवाज दी। पृथ्वीराज का तीर छूट गया। वह सीधा जाकर मुहम्मद गोरी के सीने पर लगा। गोरी तिलमिलाया। वह अपने को सँभाल नहीं पाया। धड़ाम से मच से नीचे आकर। गिरा गिरते ही उसकी मृत्यु हो गई।

दरबार में तहलका मच गया। सभी लोग चिल्लाये—"चौहान को जान से मार दो। चन्द्र कवि की हत्या कर दो। यह दोनों दुश्मन हैं। इन्होंने छिपकर साजिश की और हमारे सुलतान की जान ले ली।"

इसपर सिपाही तलवारें ले लेकर चन्द्र कवि और चौहान की ओर दौड़े।

मगर देखने वाले दंग रह गये। दोनों मित्रों ने ऐसा कमाल दिखलाया, जिसके लिए किसी ने सोचा भी नहीं था। जैसे ही गोरी के सीने पर तीर लगा। ठीक तभी चन्द्र कवि ने अपनी कमर से दो कटारें निकालीं। एक चौहान को पकड़ा दी, दूसरी अपने हाथ में रखी।

जब सिपाही दोनों के पास पहुँचे तो वे एक-दूसरे के कटार मारकर मर चुके थे। दोनों ने बदला ले लिया। दोनों की विजय हुई।

दरबार में एक ओर मुहम्मद गोरी की लाश पड़ी थी। दूसरी तरफ दोनों मित्र एक-दूसरे से लिपटे हुए चिर-निद्रा में सोये हुए थे। जमीन खून से लाल हो रही थी।

बेगमें तौबा-तौबा करके छाती पीटती हुई आँसू बहा रही थीं।

दरबार के बाहर वही बूढ़ा फकीर आवाज लगा रहा था—"है कोई अल्लाह का प्यारा, जो खुदा की राह पर?"

फकीर ने जब यह सुना कि दरबार की खुशी गम में बदल गई है, तो वह खूब जोर से हँसा। उसके मुँह से निकला—अल्लाह। तेरी इबादत में बड़ी ताकत है। तू सबकी सुनता है, मुनासिब फैसला करता है।"

मुहम्मद गोरी के शव को सफेद चादर ओढ़ा दी गई थी। लोग अफसोस जाहिर करते हुए कह रहे थे कि सुलतान की मौत बहुत बुरी हुई। वे हिन्दुस्तान जीतने न आते, तो उनका यह हाल कभी नहीं होता।

चौहान का मृत चेहरा भी ऐसा लगता था जैसे कि मुस्करा रहा है। चन्द्र कवि के बन्द होठ कह रहे थे—"बस तैयार हो जाओ, चौहान, तुम्हें निशाने पर तीर मारना है।"

